Date of Posting: 05-12-2011
डाक पंजीयन संख्या : नागौर/016/09-11
भारत सरकार पंजीयन संख्या : 35209/80

अध्यात्म योग का मासिक पत्र

प्रेक्षाध्यान

वर्ष 32
अंक 12
दिसम्बर 2011
मूल्य 25₹

ध्यान और गमन-विवेक

: With Best Compliments :

Surendra Choraria, Charwas-Kolkata

अध्यात्म योग का मासिक पत्र

प्रेक्षाध्यान

वर्ष : 32 दिसम्बर - 2011 अंक-12

सम्पादक
डॉ. समणी सत्यप्रज्ञा

सह-संपादक
डॉ. वन्दना कुण्डलिया

साज-सज्जा
अनूप खोजा
दीपशिखा दूगड़

सहयोगी
समणी रोहिणी प्रज्ञा

कार्यालय

प्रेक्षा फाउण्डेशन
तुलसी अध्यात्म नीडम्
जैन विश्व भारती,
लाडनूं - 341306, राजस्थान
फोन : 01581-222119

ईमेल :
foundation@preksha.com

सदस्यता शुल्क

एक अंक	:	25 रु.
एक वर्ष	:	300 रु.
त्रैवार्षिक	:	750 रु.
दस वर्ष	:	2500 रु.
विदेश के लिए वार्षिक	:	2500 रु.

''प्रेक्षाध्यान'' में प्रकाशित सामग्री में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। ''प्रेक्षाध्यान'' भी उनसे सहमत हों, यह आवश्यक नहीं। - सम्पादक

इस अंक में

क्षण-क्षण मुक्ति	आचार्य तुलसी	06
उपयोगपूर्विका क्रिया	आचार्य महाप्रज्ञ	08
कैसे चलें?	आचार्य महाश्रमण	11
गमन-विवेक	डॉ समणी कुसुमप्रज्ञा	14
प्रशस्त-विहार चर्या	समणी सत्यप्रज्ञा	16
Mudra	Mukhya Niyojika Sadhvi Vishrut Vibha	21
Walking on this-----	Dr Hansa Sancheti	22
Walking Analysis	Dr Samani Ramniya Praya	27
Walking Meditation ------	Samani Rohit Pragya	29

स्तम्भ

चलते-चलते	महाश्रमणी साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा	13
परिष्कार की राह		20
एक शब्द : एक चित्र		23
छोटी सी पहल		32
साक्षात्कार	बालू भाई पटेल, सूरत	33

सम्पादकीय		04
प्रेक्षा तत्त्व		05
प्रसंग		30
जिज्ञासा : समाधान		31
प्रयोगधर्मा महाप्रज्ञ	तेजकरण जैन सिपाणी साध्वी मंगलयशा	35
प्रसंग		36
अनुभव के स्वर		37
प्रसंग		39
बढ़ते चरण		40

सम्पादकीय

चरैवेति......

दुनिया दौड़ के दौर से गुजर रही है। तेज रफ्तार अनेक समस्याओं व दुर्घटनाओं का मूल है। ऐसी स्थिति में गति के संदर्भ में जागरूकता व संयम की बात वजन रखती है। जैन दर्शन की भाषा में इस लोक में विद्यमान जीव व अजीव सभी में गति-क्षमता है। इसका हेतु गति में सहायक द्रव्य धर्मास्तिकाय है।

वैदिक सूक्त है- जो चलता है, उसका भाग्य भी चलता है। 'चरैवेति चरैवेति, चरन् वै मधुविन्दते' इसलिए चलते रहो, चलते रहो। जो चलता है, वही अमृत को प्राप्त करता है। गतिशीलता की यह प्रेरणा वस्तुतः अमृतत्व को पाने की प्रेरणा है। रामचरितमानस में तुलसीदास ने कहा-

'मुद मंगलमय संत समाजु। सब जग जंगम तीरथ राजु।।'

अर्थात् संत चलते-फिरते तीर्थ हैं। उन्हें तीर्थ मानने का रहस्य उनकी प्रशस्त गति-शीलता व जागरूकता में ही निहित है। अमृत और तीर्थ का तात्पर्य है- क्षण-क्षण के प्रति जाग जाना, मोह, मूर्च्छा, आसक्ति या राग-द्वेष वश उपजने वाले आर्त्तध्यान व रौद्रध्यान से परे चले जाना, भावशुद्धि की नवीन धारा से निखार पाती चेतना के सान्निध्य को उपलब्ध हो जाना। इस उपलब्धि के बाद जो अध्यवसाय होगा, जो लेश्या का स्पंदन होगा, जो मन-वचन-काय की गति होगी, वह आत्मा के द्वारा, आत्मा के लिए व आत्मा की होगी।

इसी भाव भूमि के लिए जैन साधना में गति के लिए ईर्या-समिति शब्द का प्रयोग हुआ है। लोक भाषा में चलती का नाम गाड़ी है। गतिशील हर प्राणी है। इस गतिशीलता में निर्धारक तत्त्व अनेक हो जाते हैं, जैसे-ऊंचाई, वजन, अवस्था, सतह, भार, प्रशिक्षण, प्रयास, संतुलन आदि। सिद्धों की गति को अस्पृशद् गति कहा है। एक क्षण पहले यहां, 'लोक में' हैं, दूसरे क्षण 'वहां हैं', सिद्ध शिला में।बीच में कहीं कोई आलंबन आदि नहीं।

चलना सार्थक हो जाता है यदि सत्य का मुकाम मिल जाए, शिव का सामीप्य मिल जाए, अन्तर्निहित सौंदर्य की झलक मिल जाए। नीति कहती है-**'अत्रैव मोक्षः सुविहितानाम्।'** जिनकी हर क्रिया सुविधि से संचालित है, उनके लिए मोक्ष यहीं उपलब्ध है। कमजोर से कमजोर व्यक्ति एक कार्य तो कर ही सकता है और वह है प्रयास। विधि, संयम, यतना, जागरूकता पूर्वक एक-एक कदम बढ़ाते चलें। हजारों मीलों की यात्रा भी उठे हुए एक नन्हें कदम से शुरु होती है। यह नन्हा कदम जब उपलब्ध है, भावक्रिया, तन्मयता, तदाकारता का पर्याय बनाकर इसे आगे बढ़ाएं-संभव है-मोक्ष सामने ही हो।

- समणी सत्यप्रज्ञा

प्रेक्षा-तत्व

समिति : धर्म की जननी

इरिया-भासेसणाऽऽदाणे, उच्चारे समिई इय।
मणगुत्ती वयगुत्ती, कायगुत्ती य अट्ठमा।।

ईर्या, भाषा, एषणा, आदान-निक्षेप और उत्सर्ग-ये पांच समितियां हैं। मनोगुप्ति, वचनगुप्ति, और कायगुप्ति-ये तीन गुप्तियां हैं।

एदाओ अट्ठ पवयण-मादाओ णाण-दंसण-चरित्तं।
रक्खंति सदा मुणिणो, मादा पुत्तं व पयदाओ।।

ये आठ प्रवचन माताएं मुनि के ज्ञान, दर्शन और चारित्र का वैसे ही रक्षण करती हैं जैसे सावधान माताएं अपने पुत्रों का।

एयाओ पंच समिईओ, चरणस्स य पवत्तणे।
गुत्ती नियत्तणे वुत्ता, असुभत्थेसु सव्वसो।।

ये पांच समितियां चारित्र की प्रवृत्ति के लिए हैं और तीन गुप्तियां सभी अशुभ विषयों से निवृत्ति के लिए हैं।

जह गुत्तस्सिरियाई, न होंति दोसा तहेव समियस्स ।
गुत्ती ठिट्यप्पमायं, रूंभइ समिई सचट्ठस्स ।।

जैसे प्रवृत्ति से निवृत्त पुरुष को गमन-आगमन आदि मूलक दोष नहीं लगते, वैसे ही सम्यक्-प्रवृत्त पुरुष को भी वे दोष नहीं लगते। जैसे निवृत पुरुष प्रमाद को रोकता है, वैसे ही सम्यक् प्रवृत्त पुरुष क्रियाशील होने पर भी प्रमाद को रोकता है।

पउमिणि-पत्तं व जहा, उदयेण ण लिप्पदि सिणेह-गुण-जुत्तं।
तह समिदीहिं ण लिप्पइ, साधु काएसु इरियंतो।।

जैसे स्नेहगुण से युक्त कमलिनि का पत्र जल से लिप्त नहीं होता, वैसे ही समितिपूर्वक जीवों के बीच विचरण करनेवाला साधु पाप से लिप्त नहीं होता।

जयणा उ धम्म-जणणी, जयणा धम्मस्स पालणी चेव।
तव्वड्ढिकरी जयणा, एगंत-सुहावहा जयणा।।

यतना (अप्रमत्त चर्या) धर्म की जननी है। यतना धर्म की रक्षिका है। यतना धर्म को बढाती है। यतना एकांत सुखावह है।

जयं चरे जयं चिट्ठे, जयमासे जयं सए।
जयं भुंजंतो भासंतो, पावं कम्मं न बंधइ।।

यतना (संयम) पूर्वक चलने, यतनापूर्वक खड़े रहने, यतनापूर्वक बैठने, यतनापूर्वक सोने, यतनापूर्वक खाने और यतनापूर्वक बोलने वाला साधु पाप-कर्म का बंध नहीं करता।

फासुय-मग्गेण दिवा जुगंतर-प्पेहिणा सकज्जेण।
जंतूण परिहरंते-णिरिया-समिदी हवे गमणं।।

कार्यवश दिन में प्रासुक (जीव-रहित) मार्ग से युग-मात्र (शरीर-प्रमाण) भूमि को आगे देखते हुए, जीवों की विराधना न करते हुए गमन करना ईर्या-समिति है।

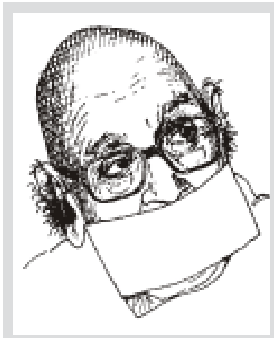

क्षण-क्षण मुक्ति

आचार्य तुलसी

स्थानांग सूत्र के पहले स्थान में 'एगे बंधे' एक बन्ध माना गया है। बन्ध का अर्थ होता है-बन्धन। बन्ध कई तरह के हो सकते हैं। जैसे-रस्सी-बंध, भुज-बंध, पग-बंध, स्नेह-बंध, द्वेष-बंध......। यहां समझने की बात यह है कि बन्धन चाहे कैसा भी क्यों न हो, आखिर वह बंधन ही है। सबसे बड़ा बंधन कर्मों का है। नौ तत्त्वों की विवक्षा में बंध शब्द कर्मों के बन्धन का अर्थ-बोधक है। हर सांसारिक आत्मा के कर्मों का बन्धन है। संसार की कोई भी आत्मा इसका अपवाद नहीं हो सकती। जिस दिन वह कर्मों के बन्धन से मुक्त हो जाती है, उस दिन वह साधारण आत्मा नहीं रहकर परमात्मा या सिद्ध बन जाती है। भाषान्तर से ऐसा भी कहा जा सकता है कि कर्म-बंध अवस्था ही संसार है। कर्म-मुक्ति का अर्थ है-संसार-मुक्ति।

कर्म-बन्ध और उसका अस्तित्व

प्राणी जब भी कोई प्रवृत्ति करता है तो उसके परिणाम स्वरूप बाहर के पुद्‌गल आकृष्ट होते हैं। आकृष्ट होकर वे पुद्‌गल आत्मा तक आते हैं और वहां चिपक जाते हैं। आत्मा के साथ पुद्‌गलों के इस सम्बन्ध को बंध कहा गया है। ये पुद्‌गल इतने सूक्ष्म होते हैं कि हम इन्हें आते-जाते आंखों से नहीं देख सकते। किन्तु आखों से न दिखाई देने मात्र से किसी के अस्तित्व को नकारा नहीं जा सकता। जो वास्तविकता है, वह सदा वास्तविकता बनी रहेगी। आंखें उसे देख पाती हैं या नहीं देख पाती हैं-यह प्रश्न गौण है।

आखों से नहीं दिखाई देने पर भी कर्मों के परिणाम तो सबके सामने हैं। उनसे हम भली भांति परिचित भी हैं। जिस चीज का परिणाम हमारे सामने प्रत्यक्ष है, उसका अस्तित्व स्वयं सिद्ध हो जाता है। फिर आंखों से न दिखाई देने का तर्क उसके अस्तित्व पर प्रश्नवाचक चिह्न नहीं लगा सकता। बहुत से लोग जानते हैं कि अमुक काम बुरा है, फिर भी वे उससे उपरत नहीं हो पाते। वे जानते-समझते बुराइयों में आकण्ठ डूबे रहते हैं। प्रायः कहा जाता है कि आदमी अज्ञान में गलती करे, यह बात तो बुद्धिगम्य है पर जानते-समझते भी गलती करे, यह बात कम समझ में आती है। किसी को समझ में आए या न आए, यह एक अलग बात है परन्तु वास्तविकता यह है कि आदमी ज्ञात अवस्था में ज्यादा गलतियां करता है। जान बूझ कर होने वाली गलतियों से भी यदि आदमी दूर होने के लिए संकल्पबद्ध हो जाता है तो उसका कर्म-बन्धन से काफी बचाव हो सकता है। जो लोग जान-बूझकर भी गलतियां करते रहते हैं, कर्मों का बंधन करते रहते हैं, उनको कैसे समझाया जाए? अज्ञान में पतंगे लौ में गिरकर मर जाते हैं, यह विवशता की

बात है। पर जान-बूझकर इस संसार में लोग दुर्व्यसनों की आग में स्वयं को झोंकते हैं, इसका क्या किया जाए? यदि हम सुबह से शाम तक सूक्ष्मता से अपनी प्रवृत्तियों पर ध्यान दें तो यह स्पष्टतया महसूस हो जाएगा कि हम न जाने एक दिन में कितनी बार क्रोध में चले जाते हैं, माया की मार से पीड़ित हो जाते हैं और अभिमान के झूले में झूलने लगते हैं।

एक बुराई के पीछे न जाने कितनी दूसरी बुराइयां आदमी के पास आ जाती है। **'पापमूल अभिमान'**-इस बात को जानते सब लोग हैं, पर अहंकार सिर पर चढकर बोलता ही रहता है। अनजाने में हुआ पाप तो माफ भी हो सकता है। परन्तु जान-बूझकर किया गया पाप कभी माफ नहीं हो सकता। कहा गया है यदि वीतराग या केवलज्ञानी के पैर के नीचे आकर कोई जीव मर जाए तो उन्हें जीव-हत्या का पाप नहीं लगता। हम पूर्ण अप्रमत्त होकर चलते हैं। इसके बावजूद भी यदि कोई जीव हमारे पैरों से मर जाता है, उसकी हिंसा (द्रव्य हिंसा) का दोष हमें नहीं लगता।

> *अज्ञान में पतंगे लौ में गिरकर मर जाते हैं, यह विवशता की बात है। पर जान-बूझकर इस संसार में लोग दुर्व्यसनों की आग में स्वयं को झोंकते हैं, इसका क्या किया जाए? जिन्होंने अपने अहंकार और वासनाओं पर विजय प्राप्त कर ली है, मन, वचन और शरीर के विकारों को छोड़ दिया है, आशा से छुटकारा पा लिया है, ऐसे सुविहित व्यक्तियों के लिए यहीं मोक्ष है।*

संसार में सबसे बड़ा बंधन कर्मों का है। कर्म-पुद्गलों के दिखाई न देने के बावजूद भी उनकी सत्ता असंदिग्ध हैं। कर्म कैसे हैं? इस प्रश्न को एक बार छोड़ दिया जाए तो भी हर प्रवृत्ति से बनने वाले संस्कार और उनके फल को तो मानना ही होगा। यह बात सभी जानते हैं कि अपने किए का फल भोगना पड़ता है। ऐसी स्थिति में कर्मों की सत्ता या अस्तित्व को स्वीकार न करने का कोई औचित्य समझ में नहीं आता। जैन तीर्थकरों ने कर्मों के बन्धन और उनसे मुक्त होने की प्रक्रिया सविस्तार समझाई है। सब कर्मों से मुक्त होने का नाम मोक्ष है। कर्मों के बंधन से कोई मुक्त हो सके या नहीं, यह एक अलग बात है पर कोई भी प्राणी बंधन नही चाहता। वह मुक्त रहना चाहता है। स्वतंत्र बनना चाहता है। यह एक वास्तविकता है। बंधन से बड़ा कोई दुःख नहीं है। इस अभिशाप या दुःख से वास्तविक छुटकारा तभी होता है, जब व्यक्ति सभी कर्मों से मुक्त हो जाता है, मोक्ष को उपलब्ध हो जाता है। मरने के पश्चात् मोक्ष की बात तो बहुत विश्रुत है, पर दूसरी विवक्षा से इस जिन्दगी में भी आदमी चाहे तो मोक्ष प्राप्त कर सकता है।

'निर्जितमदमदनानां वाक्कायमनोविकार रहितानाम्।
विनिवृत्तपराशानामिहैव मोक्षः सुविहितानाम्।।'

अर्थात् जिन्होंने अपने अहंकार और वासनाओं पर विजय प्राप्त कर ली है, मन, वचन और शरीर के विकारों को छोड़ दिया है, आशा से छुटकारा पा लिया है, ऐसे सुविहित व्यक्तियों के लिए यहीं मोक्ष है।

यद्यपि शास्त्रीय परिभाषा के अनुसार मोक्ष का अर्थ सर्व कर्मों से मुक्त हो जाना है, तथापि जीवन-मुक्त या जीते जी मोक्ष की बात भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यदि व्यक्ति यहां तक की यात्रा भी सम्पन्न कर लेता है तो मानना चाहिए कि वह एक दृष्टि से मोक्ष तक पहुंच गया है, पहुंचने का मार्ग उसके लिए प्रशस्त हो गया है। इस स्थिति को उपलब्ध होने का तात्पर्य है- मोक्ष पहुंचने में प्रमुख अवरोधक तत्त्वों पर विजय प्राप्त करना। हम सबका परम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त करना है, आत्मस्वरूप में अवस्थित होना है। पर जब तक उस स्थिति का परिपाक नहीं हो जाता है, तब तक हमें जीवित अवस्था के मोक्ष को तो अवश्य प्राप्त करना चाहिए। इससे जीवन में अनुपम आनन्द की उपलब्धि होगी। कदम-कदम में, क्षण-क्षण में जागरूकता ही इस उपलब्धि का मंत्र है।

उपयोगपूर्विका क्रिया

आचार्य महाप्रज्ञ

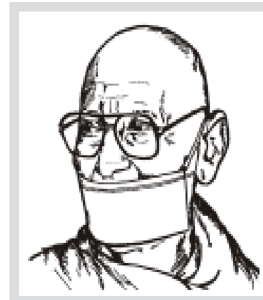

उत्तराध्ययन सूत्र अध्यात्म की रसकूपिका है, रस का स्रोत है। उसमें काव्यात्मकता के साथ-साथ सरसता और अध्यात्म का प्रवाह अविरल गति से बहता हुआ मिलता है। प्रेक्षाध्यान का एक सूत्र है- भावक्रिया। इसकी सम्यक् परिभाषा और सरल विवेचन उत्तराध्ययन सूत्र में उपलब्ध है।

क्रिया के दो प्रकार हैं-उपयोगपूर्विका और अनुपयोगपूर्विका। एक व्यक्ति अंगुली हिला रहा है, जानबूझ कर हिला रहा है, यह उपयोगपूर्विका क्रिया है। एक व्यक्ति श्वास लेता है, श्वास स्वतः आ रहा है, जा रहा है। व्यक्ति ने भोजन किया। वह भोजन अपने आप पच रहा है। पचता है, यह अनुपयोगपूर्विका क्रिया है। जो अपने आप होने वाली क्रिया है, उस पर नियंत्रण हो। यह एक साधक के लिए वांछित है किन्तु यह तो बहुत वांछित है कि जो उपयोगपूर्विका क्रिया है, स्वैच्छिक क्रिया है, उस पर नियंत्रण हो। साधक के लिए यह अनिवार्य है कि वह स्वैच्छिक क्रिया पर नियंत्रण साधे। इसका उपाय है-भावक्रिया।

जो अपने आप होने वाली क्रिया है, उस पर नियंत्रण हो। यह एक साधक के लिए वांछित है किन्तु यह तो बहुत वांछित है कि जो उपयोगपूर्विका क्रिया है, स्वैच्छिक क्रिया है, उस पर नियंत्रण हो। साधक के लिए यह अनिवार्य है कि वह स्वैच्छिक क्रिया पर नियंत्रण साधे। इसका उपाय है-भावक्रिया।

संदर्भ : शरीरशास्त्र

हम भावक्रिया को शरीरशास्त्र के संदर्भ में समझें। मनुष्य की सबसे बड़ी विशेषता है कि उसके पास मस्तिष्क है। दुनिया में जितनी मूल्यवान वस्तुएं हैं, उनमें सबसे अधिक मूल्यवान है-मस्तिष्क। मस्तिष्क है तो सबका मूल्य है। मस्तिष्क नहीं है तो किसी का मूल्य नहीं है। मनुष्य का मस्तिष्क ही मूल्यों का निर्धारण करता है, प्रतिष्ठा करता है। मस्तिष्क की एक प्रणाली रेटिकुलर ऐक्टिविटी सिस्टम (Raticular activity system) है। हमारी यह आर. ए. एस. की प्रणाली एक छलनी का काम करती है। छलनी अनाज की सफाई करती है। अनाज अलग हो जाता है, कंकर अलग हो जाते हैं। हम जिसे विवेक कहते हैं, छंटनी या विवेचन कहते हैं, वह काम है-आर. ए. एस. (R.A.S.) प्रणाली का। हमारी इन्द्रियां इतनी संवेदनाओं को ग्रहण करती हैं, जिनकी कोई सीमा नहीं। एक व्यक्ति दिल्ली, कलकत्ता जैसे महानगरों से गुजरता है, पांच-दस किलोमीटर की यात्रा करता है, हजारों-हजारों दृश्य उसके सामने आते हैं। यदि वह उन सबको ग्रहण करता चला जाए, उन पर ध्यान केन्द्रित करता चला जाए तो पागल बन जाए। आर. ए. एस. की प्रणाली का महत्त्वपूर्ण कार्य है कि वह केवल उपयोगी संवेदनों को ऊपर जाने देती है, अनुपयोगी संवेदनों को वहीं रोक देती है।

दर्शनशास्त्र के दो शब्द हैं- अनध्यवसाय और अध्यवसाय। व्यक्ति के अनध्यवसाय बहुत होता है किन्तु अध्यवसाय उसी का होता है, जो उपयोगी है। दर्शनशास्त्र के इस कथन को शरीरशास्त्र में वैज्ञानिक तरीके से समझाया है। सब बातों का अध्यवसाय नहीं होता। इसका कारण मस्तिष्क की आर. ए. एस. प्रणाली है। वह हजारों-हजारों संवेदनों में से केवल उन्हीं को प्रवेश करने देती है, जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी हैं। यह प्रणाली मध्य मस्तिष्क से लेकर चेतन और अवचेतन तक फैली हुई है। इसमें कोशिकाओं का जाल कार्य करता है।

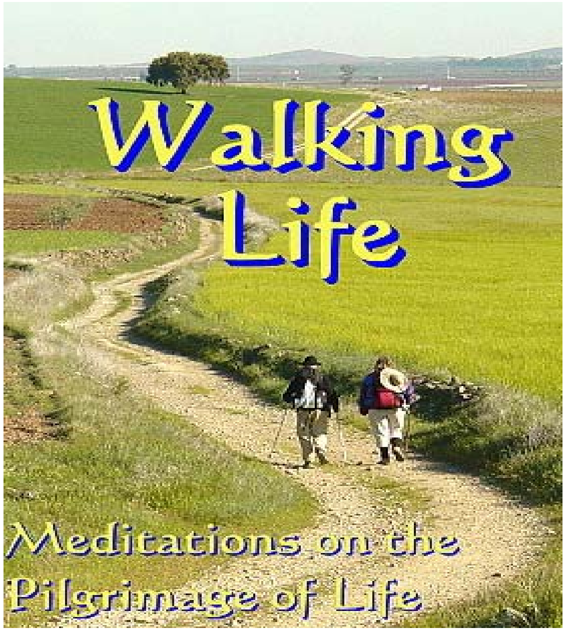

दो बातें हैं-संवेदन और अवबोध। व्यक्ति को संवेदन बहुत होता है पर अवबोध सीमित होता है। मस्तिष्क में यह क्षमता है कि अवबोध भी अनेक वस्तुओं का एक साथ हो सकता है। आर. ए. एस. की प्रणाली उस पर भी नियमन कर देती है। अनेक विषयों के अवबोध की क्षमता होने पर भी एक विषय पर एकाग्र होने की क्षमता भी इसी प्रणाली से प्राप्त होती है। यदि यह प्रणाली न हो तो आदमी किसी विषय पर एकाग्र हो ही नहीं सकता। उसका मन चारों ओर घूमता रहेगा, किसी बिन्दु पर टिक ही नहीं पाएगा। इस प्रणाली को समझना और ध्यान के द्वारा साधना आवश्यक होता है। जो व्यक्ति भावक्रिया, जागरूकता का विकास करना चाहता है, उसके लिए इस आर. ए. एस. प्रणाली को समझना बहुत उपयोगी है।

ग्रहणशीलता बढ़े

प्रेक्षाध्यान का एक प्रयोग है- शांतिकेन्द्र प्रेक्षा। इसका प्रयोजन है कि हम शांतिकेन्द्र प्रेक्षा के द्वारा उस प्रणाली को समझ लें, साध लें, जिससे हमारी जागरूकता और एकाग्रता बढ़ जाए। जीवन के लिए जागरूकता और एकाग्रता महत्त्वपूर्ण है। इन दोनों का विकास शांतिकेन्द्र प्रेक्षा के द्वारा हो सकता है। इसके लिए ग्रहणशील होना जरूरी है। जब तक यह ग्रहणशीलता नहीं बढ़ती, जागरूकता का विकास संभव नहीं है। ग्रहणशीलता का अर्थ है- ग्राह्य शब्द के साथ तादात्मय। इस स्थिति में जागरूकता की बात की जा सकती है। ग्रहणशीलता के बिना कही हुई बात भी इधर-उधर बिखर जाती है। भावक्रिया का सूत्र निरन्तर जागृत रहने का सूत्र है।

प्रहरी है संकल्प

संकल्प ऐसा जागरूक प्रहरी है, जो प्रतिक्षण सचेत बनाए रखता है। संकल्प लेने का अर्थ है- अपने भीतर एक जागरूक प्रहरी को बिठा देना। अनेक व्यक्ति कहते हैं-जब भी हम कोई गलत काम करने की सोचते हैं, तब भीतर से एक आवाज आती है-तुम जो करना चाहते हो, वह ठीक नहीं है। आवाज कौन देता है? यह सावधान करने वाला कौन है? यह हमारी आन्तरिक जागरूकता है। हमारे मस्तिष्क में एक ऐसा घटक है, जो हमारे हित की चिंता करता रहता है। व्यक्ति के सामने स्वादिष्ट और मनोज्ञ भोजन है। व्यक्ति का मन खाने को आतुर है, लेकिन भीतर बैठा प्रहरी उसे सजग कर देगा-तुम स्वादिष्ट भोजन कर रहे हो। यह तुम्हारी इच्छा है, पर यह तुम्हारे लिए अच्छा नहीं है। यह तुम्हारे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। तुम केवल मनोज्ञता को मत देखो, उसके परिणाम पर भी विचार करो। प्रहरी है-हमारी संकल्प के प्रति जागरूकता। यदि हम मस्तिष्क के उस भाग को साध लेते हैं, जो हमें जागृत बनाए रखता है तो हमारी भावक्रिया सध जाती है।

भावक्रिया : एकाग्रता

भावक्रिया के साथ एकाग्रता का बहुत गहरा संबंध है। जिस समय हम चलें, गति करें, उस समय गमन के प्रति समर्पित हो जाएं। जो काम, जिस समय करें, उस समय, उस काम के प्रति समर्पित बन जाएं। भोजन करें तो भोजन के साथ तन्मय। बातचीत करें तो उसके प्रति समर्पित। आप बातचीत कर रहे हैं और बातचीत के प्रति समर्पित नहीं हैं तो सामने वाला विजयी होगा, आपकी निश्चित हार होगी। आप उसके प्रति समर्पित हैं तो आपकी विजय निश्चित है। पढ़ना, लिखना, बोलना आदि किसी भी क्रिया को लें। यदि उसके प्रति समर्पित नहीं हैं तो हम सफल नहीं होंगे। हमारी वही क्रिया

संकल्प लेने का अर्थ है- अपने भीतर एक जागरूक प्रहरी को बिठा देना। अनेक व्यक्ति कहते हैं-जब भी हम कोई गलत काम करने की सोचते हैं, तब भीतर से एक आवाज आती है-तुम जो करना चाहते हो, वह ठीक नहीं है। आवाज कौन देता है? यह सावधान करने वाला कौन है? यह हमारी आन्तरिक जागरूकता है। हमारे मस्तिष्क में एक ऐसा घटक है, जो हमारे हित की चिंता करता रहता है। यदि तुम्हें चलना है तो केवल चलो। तुम शरीर से चलते हो, पर तुम्हारे मन और वाणी के दरवाजे खुले हुए हैं। तुम वाणी और मन से कुछ अन्य क्रिया भी कर सकते हो। पर चलते समय ऐसा मत करो। चलना है तो केवल चलने के प्रति समर्पित बनो। उस समय इन्द्रियों के विषयों को काम में मत लो।

सफल होगी, जिसके प्रति हम समर्पित हैं। इस समर्पण का नाम है-भावक्रिया, क्रिया के प्रति समर्पित हो जाना।

ध्यान का महान प्रयोग

सूत्रकार ने एक सुन्दर सूत्र दिया है-यदि तुम्हें चलना है तो केवल चलो। तुम शरीर से चलते हो, पर तुम्हारे मन और वाणी के दरवाजे खुले हुए हैं। तुम वाणी और मन से कुछ अन्य क्रिया भी कर सकते हो। पर चलते समय ऐसा मत करो। चलना है तो केवल चलने के प्रति समर्पित बनो। उस समय इन्द्रियों के विषयों को काम में मत लो। कहीं से संगीत की स्वर-लहरियां आ रही है, तुम उनमें मत उलझो। रेडियो पर न्यूज आ रही है, क्रिकेट की कॉमेन्ट्री आ रही है। तुम उस पर ध्यान केन्द्रित मत करो। ये बाहरी दुनिया से जुड़े घटक हैं। तुम्हारे मस्तिष्क के भीतर भी बहुत भरा हुआ है। अतीत की स्मृतियां जाग सकती हैं। तुम स्मृति भी मत करो। कल्पना और चिन्तन भी मत करो। चेतना केवल गति में उपयुक्त रहे। यह उपयोग चेतना, भावक्रिया जागरूकता का महत्त्वपूर्ण सूत्र और सफलता का रहस्य है।

सफलता का सूत्र

एक युवक ने बताया-मैंने प्रेक्षाध्यान का प्रयोग किया, मेरे मन में एक विश्वास पैदा हो गया। मैंने सात-आठ वर्ष पढ़ाई छोड़ देने के बाद फिर परीक्षा देने का निर्णय किया। मैं परीक्षा में केवल सफल ही नहीं रहा, अपितु विश्वविद्यालय में मैंने पहला स्थान प्राप्त किया। उसने कृतज्ञता व्यक्त करते हुए पत्र लिखा, उसकी कुछ पंक्तियां हैं-'यदि प्रेक्षाध्यान के द्वारा मेरी एकाग्रता और जागरूकता न बढ़ी होती तो कभी सम्भव ही नहीं था कि मैं इतने लंबे अंतराल के बाद परीक्षा में बैठता और बम्बई युनिवर्सिटी की परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त कर पाता!'

यह भावक्रिया जीवन-निर्माण का, ध्यान का सूत्र है। एक व्यक्ति आधा घण्टा ध्यान कर सकता है, दो या तीन घण्टा कर सकता है पर चौबीस घण्टे ध्यान नहीं कर सकता। भावक्रिया चौबीस घण्टे निरन्तर चलते रहने वाला ध्यान है। जब यह सध जाता है तब नींद में भी जागरूकता बनी रहती है।

भावक्रिया : कार्य दक्षता

हम जानते हुए काम करें, वर्तमान में जीएं-ये सारे सूत्र इसी महावृक्ष के पल्लव हैं, कोंपले हैं। इनका मूल आधार है- उपयोगपूर्विका क्रिया। इसका विकास अभ्यास के बिना संभव नहीं है। जितना शांति केन्द्र प्रेक्षा का प्रयोग प्रबल होगा, आर. ए. एस. प्रणाली परिष्कृत होगी और संकल्प बलवान बनेगा, उतना ही भावक्रिया का सूत्र हमारे भीतर घटित होता चला जाएगा। भावक्रिया सिद्ध होने का अर्थ है- कर्म में कौशल की प्राप्ति। गीता में कहा गया-'योगः कर्मसु कौशलम्।' इस युग में एफिशिएन्सी (दक्षता) का बहुत महत्त्व है। जहां भी चयन का प्रश्न आता है, कार्य के कौशल को देखा जाता है। कार्य की दक्षता के आधार पर ही व्यक्ति अच्छी जगह पर नियुक्ति पा सकता है। उसको बढ़ाने का महत्त्वपूर्ण प्रयोग है- भावक्रिया। कर्म-कौशल के इस विकास-सूत्र को पकड़ पाएं तो विकास के अगले दरवाजे स्वतः खुलते चले जाएंगे।

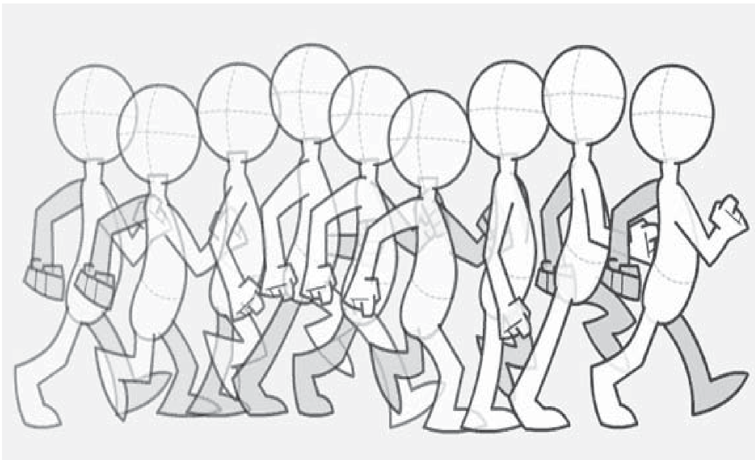

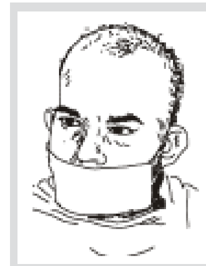

कैसे चलें?

आचार्य महाश्रमण

एक संस्कृत कवि ने सुन्दर कहा है-

हस्ती स्थूलवपुः स चांकुशवशः किं हस्तिमात्रोंऽकुशः।
दीपे प्रज्ज्वलिते प्रणश्यति तमः किं दीपमात्रं तमः।।
वज्रेणापि हताः पतन्ति गिरयः कि वज्रमात्रो नगः।
तेजो यस्य विराजते स बलवान् स्थूलेषु कः प्रत्यय!।।

स्थलू हाथी को एक छोटा सा अंकुश वश में कर सकता है, एक नन्हा सा दीपक सघन अंधकार का हरण कर सकता है, बड़े-बड़े पहाड़ों को छोटा सा वज्र धराशाही कर सकता है। इसलिए 'यह छोटा है', ऐसा समझकर किसी की अवज्ञा नहीं करनी चाहिए।

मानव जीवन बहुत कीमती है। इसको सजाने-संवारने के लिए छोटी लगने वाली बातों पर भी ध्यान देना आवश्यक है। कैसे उठना, कैसे बैठना, कैसे चलना, कैसे बोलना आदि बातें बहुत छोटी लगती हैं पर जीवन-महल को खड़ा करने वाली नींव की ईंटें भी ये ही हैं।

चलने में विवेक

हम चलने की क्रिया पर विचार करें। चलना जीवन की एक अपेक्षित क्रिया है। बच्चा जन्म लेता है। कुछ समय बाद उसे बैठना सिखाया जाता है। फिर उसे अंगुली पकड़कर चलना सिखाया जाता है। जब वह ठुमक-ठुमक कर चलता है, तब उसे देखकर सभी आह्लादित होते हैं।

चलना अर्थात् गति करना। गति दो प्रकार की होती है। एक गति है-पैरों से चलना। दूसरी गति है-जीवन को विकास की दिशा में आगे बढ़ाना। संसार के सभी प्राणी अपने-अपने ढ़ंग से गति क्रिया करते हैं। चलना एक प्रकार की गति है, विकास का संकेत है किन्तु इस गति में भी विवेक का होना जरूरी है। विवेक अर्थात् कब चलना, कैसे चलना, क्यों चलना आदि। पहली बात है-बिना प्रयोजन न चले। बिना प्रयोजन वही चलता है, जो समय का मूल्य नहीं आंकता। अपेक्षा हो तो मीलों चलना भी सार्थक है और अनपेक्षित एक कदम चलना भी समय को जाया करना है। दूसरा प्रश्न है-प्रयोजन से चलें तो कैसे चलें? आदमी उद्देश्य विशेष के साथ चलने के लिए प्रवृत्त हो तो सबसे पहले इष्ट मंत्र का स्मरण करें ताकि प्रवृत्ति के साथ मंगल जुड़े और चित्तवृत्ति मंगल से भावित हो जाए। पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री महाप्रज्ञ हरियाणा में विहार कर रहे थे। रास्ते में एक संत दुर्घटनाग्रस्त हो गए। आचार्यश्री महाप्रज्ञ ने उस समय एक मंत्र दिया- 'ऊँ फुं क्ष्वीं ह्रीं ऐं नमः ठः ठः ठः स्वाहा।' और कहा-यात्रा से पूर्व इस मंत्र का 21 बार स्मरण कर लेना चाहिए ताकि विघ्न-बाधाओं से बचा जा सके। चलने का विवेक अहिंसा की साधना को भी पुष्ट कर सकता है। दशवैकालिक सूत्र में चलने का विवेक देते हुए कहा गया है-साधु जल्दी-जल्दी न चले, ऊंचा मुंह करके न चले, बातें करता हुआ न चले, हंसता हुआ न चले, स्वाध्याय करता हुआ न चले, व्यग्रचित्त से न चले आदि। एक राजस्थानी दोहा है-

नीचै देख्यां चार गुण, गमी वस्तु मिल जाय।
दया पलै, हिंसा टलै, दृष्टि दोष टल जाय ।।

नीचे देखकर सावधानी पूर्वक चलने से चार गुण निष्पन्न होते हैं-खोई हुई वस्तु उपलब्ध हो सकती है, दया

भावना पुष्ट हो सकती है, हिंसा से बचाव हो सकता है और दृष्टिदोष टल सकता है। चलते-चलते इधर-उधर दृष्टिक्षेप करने वाले के प्रति चोर, जुआरी, कामातुर आदि होने की आशंकाएं भी हो सकती हैं। साधु के लिए नियम है कि वह ईर्यापूर्वक चले अर्थात् शरीर प्रमाण भूमि को देखते हुए सावधानीपूर्वक चले, इन्द्रिय-विषयों का वर्जन करता हुए चले। चलते समय मात्र चलने का ही ध्यान रखे।

प्रेक्षाध्यान के सन्दर्भ में 'गमनयोग' शब्द प्रयुक्त होता है। गमनयोग से तात्पर्य है-मात्र गति पर ही ध्यान केन्द्रित रखना। चलते समय बात करना, चिन्तन करना आदि क्रियाएं सामान्यतः नहीं होनी चाहिए। साधु को कैसे चलना चाहिए? इस सन्दर्भ में उत्तराध्ययन सूत्र में कहा गया है- **उवउत्तेरियंरिए** अर्थात् साधु सावधानी से दत्तचित्त होकर उपयोगपूर्वक चले।

सड़क पर चलने के कुछ नैतिक नियम भी हैं। सड़क के बीच में नहीं चलना चाहिए। कभी-कभी थोड़ी सी सुविधा के लिए आदमी जानता हुआ भी विपरीत दिशा में चलने लगता है किन्तु नियम का अतिक्रमण कभी-कभी खतरे की घंटी बन सकता है। सड़क के एक ओर लिखा होता है-सावधानी हटी, दुर्घटना घटी। इस वाक्य को ध्यान में रखते हुए आदमी सावधानी पूर्वक चले।

> *बिना प्रयोजन वही चलता है, जो समय का मूल्य नहीं आंकता। अपेक्षा हो तो मीलों चलना भी सार्थक है और अनपेक्षित एक कदम चलना भी समय को जाया करना है। आदमी उद्देश्य विशेष के साथ चलने के लिए प्रवृत्त हो तो सबसे पहले इष्टमंत्र का स्मरण करे ताकि प्रवृत्ति के साथ मंगल जुड़े और चित्तवृत्ति मंगल से भावित हो जाए। अध्यात्म की दिशा में प्रस्थान के लिए जरूरी है-जीवन को ज्ञान के प्रकाश और आचरण की सौरभ से भरा जाए।*

अध्यात्म की दिशा में प्रस्थान

गति का दूसरा अर्थ है-जीवन में विकास करना। यह भी एक प्रकार की गति है। भारतीय संस्कृति 'चरैवेति' को बहुत महत्त्व देती है। उसके अनुसार जो चलता है, उसका भाग्य भी उसके साथ चलता है और जो ठहरता है, उसका भाग्य भी ठहर जाता है। यहां चलने का अर्थ है-अध्यात्म की दिशा में प्रस्थान करना। इस प्रस्थान के लिए जरूरी है-जीवन को ज्ञान के प्रकाश और आचरण की सौरभ से भरा जाए।

जो व्यक्ति उदारचेत्ता होता है, ईमानदार होता है, नशामुक्त जीवन जीने वाला होता है, विनम्र होता है, मृदु होता है, शांत स्वाभावी होता है, बड़ों का आदर करना जानता है, औरों के कल्याण की भावना रखता है, सरल होता है, उसका जीवन सद्गुणों की सौरभ से भरा होता है। अपनी प्रज्ञा के प्रकाश में व्यक्ति स्वयं झांके और देखे-उसके जीवन में इन सद्गुणों की सौरभ है या नहीं? यदि है तो निश्चित ही उसकी गति प्रशस्त है। जीवन को मंजिल की ओर गतिमान करने के लिए ज्ञान का प्रकाश और आचरण की सौरभ चाहिए। ज्ञान के आलोक में व्यक्ति अपना आत्म निरीक्षण करता रहे और सदाचरण की सौरभ से जीवन को महकाता रहे।

ईया-समिति

ईर्या समिति में सजग रहो, श्रमण सती
पग-पग पक्की जयणा राखो झांको पथ प्रति
पंथ प्रति कोई चूको मति।।
आठूं मातावां मांही आ ही है बड़ी
संयम सुत रक्षा हेत इणने है गढ़ी
पोखे पलक पलक माता ईर्या समिति।।
गात्र मात्र भूमि जोवो मारग दरो
आंकी बांकी झांकी कोई मति रे करो
जियां रहे सुप्रसन्न माता ईर्या समिति।।
गाडर ज्यूं नीची गाबड़ राखता रहो
मदवे मंयगल ज्यूं ही मस्ती में बहो
जियां हुवे ना नाराज माता ईर्या समिति।।
बरजी दसू बोल हास कितोल पंथ में
बातां रमझोल ठड्डा ठोल पंथ में
थाने करे है मना ही माता ईर्या समिति।।
अहिंसा भी हिंसा नामे पामे जो प्रथा
हिंसा भी अहिंसा सुणल्यो आगम कथा
इण में हेतुभूत होवे माता ईर्या समिति।।
बालवये जीत मुनि पाली रे बाजार
नाटक नहीं देख्यो लिखतां आंख ऊठार
तो क्यूं मारग में बिसारो माता ईर्या समिति।।
रात-रात मात थारी बात करे ना
प्रात हुआ मात बिना काम सरे ना
राखे पक्की आ रुखाली माता ईर्या समिति।।
भारमल्ल स्वामी नामी तेरापंथ में
एक बार चूक दंड तेले रो खमे
किती किन्ही है कड़ाई माता ईर्या समिति।।
एक बार सौ सहस्र लाख बार जो
क्रोड बार कहूं माता ईर्या ने भजो
तुलसी बीदाणे मनावे माता ईर्या समिति।

- आचार्य Jh तुलसी

चलते-चलते थके पथिक जो

- महाश्रमणी साध्वी प्रमुखा कनकप्रभा

चलते-चलते थके पथिक जो, उन्हें नीड़ का पन्थ दिखाएं,
गहराया है तिमिर जहां पर, वहां शीघ्र ही दीप जलाएं।।

आंखों में सपने हैं सुन्दर,
नहीं सत्य से रिश्ता जोड़ा।
मंजिल से विपरीत दिशा में,
दौड़ रहा है मन का घोड़ा।
उजड़े जीवन के खेतों में,
अरमानों की पौध उगाएं।।

चाह उजाला पाने की पर,
तम की चादर बिछी सामने।
खोज रहे हैं सबल सहारा,
जीवन की पतवार थामने।
घाव हरे जो अन्तर्मन के,
उन पर मरहम आज लगाएं।।

थी उमंग उर में हंसने की,
किन्तु आंसुओं ने आ घेरा।
जीवन की पोथी लिखनी थी,
लिखा गया पर एक न पैरा।
लेखन में अवरोध बनी उन,
दीवारों को तोड़ गिराएं।।

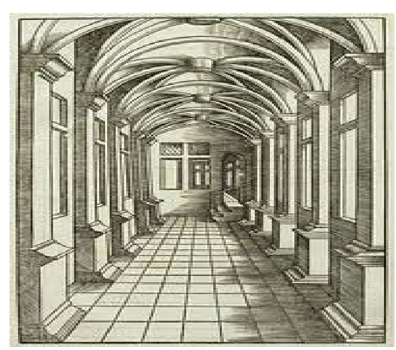

गमन-विवेक

डॉ. समणी कुसुमप्रज्ञा

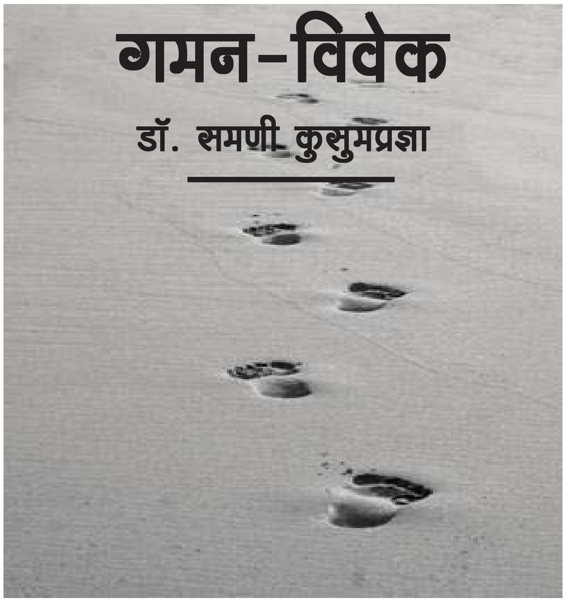

सामाजिक प्राणी के लिए चलना जीवन की अपरिहार्य अपेक्षा है। भगवान् महावीर ने जीवन की अन्य अनेक कलाओं के साथ गमन की कला का प्रशिक्षण भी दिया। पांच समितियों में प्रथम समिति गमन विवेक का निर्देश करती है। आगम-साहित्य में गमन विवेक को प्रकट करने वाले अनेक सूक्त मिलते हैं-

इंदियत्थे विवज्जेत्ता, सज्झायं चेव पंचहा।
तम्मुत्ती तप्पुक्कारे, उवउत्ते रियं रिए।।
पुरओ जुगमायाए, पेहमाणो महिं चरे।
चरे मंदमणुव्विग्गो अव्वक्खित्तेण चेयसा।।
जुगमेत्तंतरदिट्ठी, पदं पदं नसति चक्खुपूतं च।।

गमन-विवेक के लिए ध्यातव्य बिंदू हैं-

युग प्रमाण भूमि का दर्शन

ईर्या समिति का मुख्य बिंदु है- सामने बैल के जुए अर्थात् अपने शरीर प्रमाण भूमि को देखते हुए चलना। यदि दृष्टि नासाग्र के सामने रहे तो व्यक्ति आगे से आगे युग प्रमाण भूमि को देखते हुए चल सकता है तथा दृष्टि गमन-पथ से विचलित नहीं होती। भगवान बुद्ध ने साधु को युगमात्र दर्शी कहा है।

मनुस्मृति का ''दृष्टिपूतं न्यसेत् पादं'' सूक्त इसी का संवादी है। इस क्रम से गति करने से लम्बे समय तक चलने पर भी थकान का अनुभव नहीं होता।

द्रुत गति का अभाव

दुत गति से चलना ईर्या समिति का पलिमंथु है। भगवान महावीर ने असमाधि के बीस स्थानों में प्रथम स्थान शीघ्र चलना माना है। शीघ्र चलने से व्यक्ति न तो युग प्रमाण भूमि को देखते हुए चल पाता है और न ही गमन क्रिया में एकाग्र हो पाता है।

इंद्रिय विषयों का वर्जन

चलते समय पांच इंद्रियों के किसी भी विषय में प्रवृत्त न होने से ही ईर्या समिति की सम्यक् परिपालना होती है। सूंघना, चखना, सुनना, बोलना और मनोज्ञ दृश्य देखना-इन पांच विषयों में आसक्त होने से चित्त खण्डित हो जाता है। आचार्य महाप्रज्ञ के शब्दों में उपयुक्त अवस्था में केवल वर्तमान क्रिया सामने रहती है, इंद्रिय के सारे विषय गौण हो जाते हैं। आचार्य तुलसी चलते समय साक्षात् गति बन जाते थे। आत्मविश्वास के साथ कही गई उनकी यह आत्माभिव्यक्ति भी इसका प्रमाण है- गुप्तचर बनकर भी यदि कोई मेरी गमन क्रिया देखे और गलती बताए तो मुझे प्रसन्नता होगी। एक प्रसंग भी उनकी इसी जीवन्त साधना का निदर्शन है। दिल्ली से प्रस्थान करके आचार्य तुलसी पिलानी पधारे। पिलानी से प्रस्थान करते समय जुगलकिशोर बिड़ला विहार में गुरुदेव के साथ चलने लगे। चलते समय वे कुछ प्रश्न पूछ रहे थे। गुरूदेव तुलसी जब उनके प्रश्नों का उत्तर देते, अपने पैरों को थाम लेते। बिड़लाजी ने आश्चर्यमिश्रित शब्दों में पूछा-क्या आपके पैरों में दर्द हैं, जो बार-बार रुकना पड़ रहा हैं? गुरूदेव ने उनको समाहित करते हुए कहा-हमारी साधना का प्रमुख अंग है कि हम चलते हुए बात नहीं करते। इसे हम ईर्यासमिति अथवा भावक्रिया कहते हैं। यह बात सुनकर बिड़लाजी अभिभूत हो गए और खेद के साथ बोले-क्षमा करें, मुझे आपके साथ चलते हुए बात नहीं करनी थी।

पांच प्रकार के स्वाध्याय का वर्जन

वाचना, पृच्छना, परिवर्तना, अनुप्रेक्षा और धर्मकथा-ये पांच प्रकार के स्वाध्याय गमन योग में वर्जित है। स्वाध्याय करने से चेतना विभक्त हो जाती हैं। महावीर

ने उसी क्रिया को जीवन्त कहा है जो सम्पूर्ण चेतना के साथ होती है चित्त की एक भी रश्मि यदि किसी अन्य कार्य तथा मानसिक चिन्तन में संलग्न है, इसका अर्थ है कि चेतना खंडित हो गई और क्रिया केवल शरीर के द्वारा सम्पन्न हुई है। चेतना न जुड़ने से वह मृत हो जाती है।

तन्मूर्ति एवं योगयुक्तता का प्रयोग

स्वामी विवेकानंद ने सफलता का राज बताते हुए कहा-'मैं जिस समय जो कार्य करता हूं, उसी में तन्मय रहता हूँ। शेष सारे कार्य उस समय मस्तिष्क का दरवाजा नहीं खटखटाते। यह एकाग्रता ही मेरी सफलता और शक्ति का राज है।' आचार्य महाप्रज्ञ भी कार्यान्तर में संलग्न होने के बाद पिछले कार्य भी चिन्ता नहीं करते थे।

भगवान् महावीर ने गमन क्रिया के समय तन्मूर्ति शब्द का प्रयोग किया है। उसका अर्थ है कि चलते समय एकाग्रचित्त, दत्तचित्त उसके प्रति पूर्ण समर्पित होकर चलना। अस्तित्व गमन-क्रिया से अभिन्न रहे, उसमें पूर्ण अभेद स्थापित होकर व्यक्ति स्वयं गमन क्रिया बन जाए। एक क्षण भी चलने की स्मृति का लोप न हो। जागरूकता पूर्वक चलने से चेतना द्रष्टा बन जाती है। उस समय योगयुक्तता की स्थिति बन जाती है। प्रत्येक कदम चेतना की साक्षी से उठे, उसकी जानकारी में चले। चित्त में कहीं किसी प्रकार का विक्षेप या उद्विग्नता न हो। इस संदर्भ में आचार्य तुलसी का अनुभव है कि भावक्रिया से गति करने से मन को अमन बनाया जा सकता है। किसी भी प्रकार का विक्षेप या तनाव ईर्यासमिति को खण्डित कर देता है। बौद्ध साहित्य में इसे स्मृति प्रस्थान कहा गया है।

सुनने में यह प्रयोग जितना सरल प्रतीत होता है, अभ्यास में उतना ही कठिन है। यदि इस रूप में चलने का अभ्यास हो जाए तो गमन समाधि और योग में परिवर्तित हो जाता है। भगवान बुद्ध ने चंक्रमण के पांच लाभ बताए हैं-

1. लम्बे मार्ग को पार करने में समर्थ होता है। 2. चित्त विकारों का नष्ट करने में समर्थ होता है। 3. शारीरिक रोग कम सताते हैं। 4. भोजन का परिपाक सुगम हो जाता है। 5. समाधि चिरस्थायी होती है। आज विज्ञान ने सिद्ध कर दिया है कि टहलने से मस्तिष्क में कनेक्शन बनते हैं। जिससे स्मरण शक्ति और बौद्धिक क्षमता का विकास होता है। यह अनुभवगत बात है कि दीर्घश्वास के साथ जागरूकता पूर्वक चलने से न केवल शारीरिक क्षमता का विकास होता है, अपितु कार्य क्षमता भी बढती है। महावीर द्वारा प्रदत्त ईर्यासमिति को हम अपना साथी बना लें श्रेयस् का अवतरण स्वतः हो जाएगा।

के व ल चलें

ध्यान करने वाले को बाहर से देखकर लगता है कि आदमी निकम्मा बैठा है, पर भीतर में तो एक बड़ी ज्योति जल रही होती है। बड़ा पुरुषार्थ चलता है। बड़ा प्रयत्न चलता है। अभ्यास करते-करते समता जाग जाती है, जागरूकता और एकाग्रता बढ़ जाती है। सांझ के समय गमन-योग हो रहा था। बाहर से भाई आये हुए थे। उन्होंने कहा-'ये सब लोग भोजन पचाने के लिये चल रहे हैं, घूम रहे हैं।' मैंने कहा-इतना खाया ही नहीं कि केवल चलें! केवल चलें। चलते जायें, चलते जायें- न विकल्प, न स्मृति, कुछ भी नहीं। केवल चल रहा हूं। पैर उठ रहा है। दायां पैर उठा, बायां पैर उठा। केवल चलने की स्मृति, और सारी स्मृतियां समाप्त हो जायें। यह गमन-योग, जागरूकता का प्रयोग है। जिस समय जो काम करें, उस समय उसी का अनुभव रहे। चलते समय चलने का अनुभव, बोलते समय बोलने का अनुभव, बैठते समय बैठने का अनुभव, हाथ उठे तो हाथ के उठने का अनुभव और हाथ नीचे आये तो हाथ नीचे आने का अनुभव, सोये तो सोने का अनुभव, खाये तो खाने का अनुभव। जब इस जागरूकता का निर्माण होता है, तब भय को घुसने को मौका ही नहीं मिलता।

प्रशस्त विहार-चर्या

समणी सत्यप्रज्ञा

साधक के लिए निर्देश है-चलते समय बात न करें, दौड़ते हुए न चले.... आदि-आदि। आज यातायात-व्यवस्था की ओर से निर्देश है-सड़क के दाईं ओर चलें, वाहन चलाते समय मोबाइल फोन का प्रयोग न करें.... आदि-आदि। ये निर्देश गति को सम्यग्, संतुलित, सजग व स्वस्थ बनाने के लिए हैं।

जीवन यात्रा के लिए प्रवृत्ति अपेक्षित है और अशुभ से बचने के लिए निवृत्ति अपेक्षित है। जीव का एक नाम गति है। गमन की क्रिया जीवन के साथ जुड़ी हुई है। मुनि के जीवन में प्रवृत्ति और निवृत्ति का संतुलन होता है। प्रायः शरीर की स्थिर अवस्था में भी शरीर के भीतर का कारखाना व उससे सूक्ष्म स्तर पर अध्यवसाय, कर्म व चेतना के प्रकम्पनों की यात्रा चलती रहती है। इन्ही प्रकंपनों के कारण एक जीवन से दूसरे जीवन की यात्रा भी होती है। फलतः जीव का गति नाम सार्थक भी है।

गति का सामान्य अर्थ है-चलना। प्रकाश की सामान्य गति प्रति सैकेण्ड 299792458 किमी है। ब्लैक हॉल की तरफ से देखें तो यह कुछ मीटर जितनी सी धीमी गति प्रतीत होगी व गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र से बाहर जाकर देखने पर जिलियन किमी।

ध्वनि की सामान्य गति प्रति सैकेण्ड 343.2 मी. हैं तो पृथ्वी की गति 1000 मील प्रतिघंटा है। मस्तिष्कीय न्यूरोन प्रति सैकेण्ड 200 बार स्पंदन कर सकता है और हर स्पंदन के साथ एक न्यूरोन 1000 अन्य न्यूरोन्स के साथ संबंध स्थापित कर सकता है। इसका गणित करें तो कई मिलियन-बिलियन गति का चित्र सामने आ जाता है। मन, भावना व प्रकंपनों के जगत में गति की किसी सीमा का आकलन आसान नहीं। स्वस्थता व संतुलन के लिए गति का विवेक अपरिहार्य है।

चलना यद्यपि एक शारीरिक क्रिया है लेकिन इसमें जीवन के हर आयाम की प्रतिध्वनि समाहित है। सजगता से जुड़ी गति अधिक जीवंतता व लक्ष्य की स्पष्टता की सूचक है। गमन-आगमन संबंधी सम्यक् प्रवृत्ति अहिंसा के विवेक से जुड़ कर जैन साधना की भाषा में ईर्या समिति बन जाती है। यह महाव्रतों की सुरक्षा का एक महत्त्वपूर्ण साधन है।

महाव्रत साधना पथ पर कदम रखते ही साधक का पहला प्रश्न होता है-कैसे चलूं?[1] इस प्रश्न में शारीरिक गति क्रिया से लेकर जीवन की प्रत्येक क्रिया के संदर्भ में समाधान की मांग है। श्रमण महावीर स्वयं बताते-संयम से चलना, संयम से खड़ा रहना आदि। इन बातों को सीख लेने से जैसे अनगार जीवन की सारी कला को सीख लेता है, ऐसा उन्हें लगता। ईर्या के आलम्बन, मार्ग, यतना, विहार-चर्या आदि के माध्यम से इस प्रश्न को विस्तार से समाधान भी दिया गया है।[2]

साधना के क्षेत्र में गमन-योग का निर्देश है। आचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार-चलते समय भी ध्यान किया जा सकता है। ध्यान का लक्षण है-उपयुक्त होना, लक्ष्य के प्रति एकाग्रचित, दत्तचित्त अथवा समर्पित होना। उपयुक्त अवस्था में व्यक्ति अपने लक्ष्य के साथ तन्मूर्ति-तन्मय हो जाता है। गमन योग के समय गमन करने वाला और गति दो नहीं रहते। गमन करने वाला स्वयं गति बन जाता है। उपयुक्त अवस्था में केवल लक्ष्य ही सामने रहता है, शेष विषय गौण हो जाते हैं। तन्मूर्ति व तत्पुरस्कार इसके संवादी शब्द हैं। काया और मन का ईर्या में ही लगे रहना गमन की उपयुक्तता है। उसमें वचन का व्यापार ही नहीं होता। मुनि इस प्रकार उपयुक्त होकर गमन करता है।[3]

ईर्या के आलम्बन

चलने के लिए आलम्बनभूत उद्देश्य हैं-ज्ञान-दर्शन-चारित्र की वृद्धि। महापथ के पथिक को प्रांरभ में ही आशीर्वाद मिलता है-

'नाणेणं दंसणेणं च चरित्तेण तवेण य।

खंतीए मुत्तीए वड्ढमाणो भवाहि य।।[4]

अर्थात् ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, क्षांति, मुक्ति आदि से सदा वर्धमान बनो। इसी आशीर्वाद को फलित करने में साधक का अभीक्ष्ण उपयोग रहता है।

देशाटन या यायावरी को ज्ञान का बड़ा माध्यम माना गया है। पर्यटक साधक भिन्न-भिन्न विद्याओं के पारगामी आचार्य तथा बहुश्रुत मुनियों से मिलता है। उसे तीन प्रकार के अतिशयों की उपलब्धि होती है-सूत्रार्थ

अतिशय, सामाचारी अतिशय तथा विद्या-योग-मंत्र विषयक अतिशय। साधक के इस तरह के देशाटन को देख-सुन कर अन्य साधक भी सूत्रार्थ ग्रहण में पराक्रम करने लगते हैं। विविध प्रदेशों की सभ्यता-संस्कृति का ज्ञान भी इससे होता है। देशी भाषा कौशल देशाटन से ही संभव है। जब देशी भाषा में उपदेश दिया जाता है तो लोग सोचते हैं-ये हमारी भाषा में बोलते हैं अतः हमारे हैं। इस प्रकार वे अपनत्व से बंध जाते हैं।

देशाटन का महत्त्वपूर्ण लाभ दर्शन-विशुद्धि व स्थिरीकरण है। यात्रा के दौरान साधक अतिशय युक्त, अचिन्त्यप्रभाव युक्त साधकों के साधना क्षेत्रों को भी साक्षात् देखता है, तब निःशंकता के कारण उसका सम्यग् दर्शन अतीव विशुद्ध हो जाता है। विहरणशील भव्य साधकों को देखकर तत्रस्थ साधकों में संवेग उत्पन्न होता है। साधक स्वयं सुविहित, अप्रमत्त तथा विशुद्ध लेश्या वाले साधकों का स्थिरी करण करता है।[5]

ईर्या का समय

ईर्या के लिए समय है-दिवस। संयमी के लिए कहीं कोई रात्रि तो होती नहीं। उनके लिए कहा गया-''या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमीः।''[6] अप्रमाद की साधना में लीन संयमी सदा जागृत होता है। 'द्रव्य निद्रा लीन भी वे सजग होते।'[7] 'नो मे रात्रिः, मे रात्रिः[8], की धुन में, स्वाध्याय और ध्यान में उनका समय सार्थक होता है।

ईर्या का मार्ग

ईर्या के लिए मार्ग का निर्देश करते हुए कहा गया-साधक उत्पथ का वर्जन करें। हित की प्राप्ति और अहित के परिहार के लिए सर्वज्ञ द्वारा उपदिष्ट कार्य को करना सत्पथ पर गमन है। उससे हट कर न करना उत्पथ का वर्जन है।[9]

चलने के संदर्भ में पंथ संबंधी व शारीरिक, मानसिक स्तर पर सजगता संबंधी विस्तार से जैन आगमों में वर्णन है। ये निर्देश वस्तुतः चारित्र के उत्पादन, रक्षण व विशोधन के लिए हैं।[10]

पथ संबंधी विशेष निर्देश

साधक बीज, घास, जल, पृथ्वी, त्रस, आदि जीवों का परिवर्जन करते हुए चले। वर्जित मार्ग, गड्ढे, विषम-स्थान, पंकिल, हिलते काष्ठ, शिला, ईंट, संक्रम आदि के मार्ग से न जाए।[11]

स-रजस्क पैरों से छाई, गोबर, अंगार पर न चले। वर्षा, कुहासा गिरने के समय न चले। महावात संपातिक जीवों की बहुलता के समय न चले। हंसते, बातें करते, ऊपर-नीचे देखते हुए न चले।

निम्न द्वार, अंधकार पूर्ण कोठे, अतिभूमि आदि में संयम सह लोक मर्यादा की रक्षा के लिए भी न जाए। आच्छादित द्वार आदि को अपने हाथों से खोलने से साधक अप्रियता या अविश्वास का पात्र बन सकता है। लोग ऐसी स्थिति में सोचने लगते हैं-यह बेचारा कितना दयनीय और लोक व्यवहार से अपरिचित है, जो सामान्य उपचार को नहीं जानता। व्यावहारिक असभ्यता और जीव-वध-दोनों दोष इनमें संभव है।[12] गाय, बैल आदि जहां हो, बाल-क्रीडा स्थान, युद्ध-शस्त्र आदि के स्थान पर भी न जाएं।[13] इन सभी में आत्म रक्षा, संयम रक्षा व लोक व्यवहार के प्रति सजगता का समावेश है।

शारीरिक व मानसिक स्थिति संबंधी विशेष निर्देश

1. **अनुन्नत** - साधक उन्नत होकर न चलें। उन्नत दो प्रकार के होते हैं- द्रव्य उन्नत और भाव उन्नत। जो मुंह ऊंचा कर चलता है, आकाशदर्शी होता है, उसे द्रव्य उन्नत कहते हैं। जो दूसरों की हंसी करता हुआ चलता है, जाति आदि आठ मदों से अभिमानी होता है, वह भाव-उन्नत कहलाता है। साधक के लिए द्रव्य और भाव दोनों दृष्टियों से अनुन्नत गमन का निर्देश है।[14]

जो ऊंचा मुंह कर चलता है, वह ईर्या-समिति का पालन नहीं कर सकता। लोग भी कहने लग जाते हैं-देखो! उन्मत्त की भांति चल रहा है, अवश्य ही यह विकार से भरा हुआ है। जो भावना से उन्नत होता है, वह दूसरों को तुच्छ मानता है। दूसरों को तुच्छ मानने वाला लोकमान्य नहीं होता।[15] बॉडी लैंग्वेज या नॉन वर्बल लैंग्वेज में भी ऐसी स्थिति को अहंकारी माना जाता है।

2. **अवनत** - साधक झुककर न चले। अवनत के भी दो भेद हैं-द्रव्य अवनत और भाव अवनत। द्रव्य अवनत उसे कहते हैं, जो झुककर चलता है। भाव अवनत उसे कहते हैं, जो दीन व दुर्मना होता है। जो द्रव्य-अवनत होता है, वह मखौल का विषय बनता है। लोग उसे बगुला भगत कहने लगते हैं। जैसे- बड़ा उपयोग युक्त है कि इस तरह नीचे झुक कर चलता है।[16] वृद्धत्व के कारण झुक कर चलती वृद्धा से, मखौलवश पूछा गया-तुम्हारा क्या नीचे गिर गया, जिसे खोज रही हो? वृद्धा ने मार्मिक उत्तर देते हुए कहा-मेरा यौवन रूपी मोती खो गया, उसे मैं खोज रही हूं। बॉडी लैंग्वेज के

अन्तर्गत भी झुक कर चलने को आत्म सम्मान व आत्म विश्वास की कमी का द्योतक माना गया है।

भाव से अवनत वह होता है, जो क्षुद्र भावनाओं से भरा होता है।[17] अपनी ही दुर्बलताओं से दबा होने से लज्जा वश सिर उठा कर चलने का साहस वह नहीं कर पाता। साधक के लिए आदेय है कि इन दोनों ही प्रकारों से अवनत वह न हो।

3. अप्रहर्ष - प्रहर्ष विकार का सूचक है। हास्य भी कषाय है इसीलिए हंसते हुए चलने का निषेध है।

4.अनाकुल - साधक आकुल होकर न चले। आकुलता शरीर, मन व वाणी-इन तीनों स्तरों पर संभव है।

चलते समय मन नाना प्रकार के संकल्पों से भरा हो या श्रुत-सूत्र और अर्थ का चिंतन चलता हो, वह मन की आकुलता है।

विषय- भोग संबंधी बातें करना, पूछना, या पढ़े हुए ज्ञान की स्मृति करना वाणी की आकुलता है।

अंगों की चपलता शरीर की आकुलता है। क्रोध आदि की स्थिति भी आकुलता है। साधक इन सारी आकुलताओं का वर्जन करते हुए चलें।[18]

5. दौड़ता हुआ न चले- दौड़ते हुए चलने का निषेध प्रवचन-लाघव तथा संयम-विराधना-इन दोनों दृष्टियों से है। कायिक चेष्टा के संयम की दृष्टि से यह निर्देश महत्त्वपूर्ण है।[19]

6. असंभ्रान्त - संभ्रम चित्त-चेष्टा है। संभ्रान्त दशा में त्वरा-शीघ्रता होने लगती है। मन की ऐसी दशा से उचित उपयोग नहीं रह पाता। शरीर और मन की एकतानता न रहने से प्रतिलेखन में प्रमाद होता है। ईर्या-समिति का शोधन नहीं होता।[20] ऐसे अनेक दोषों की उत्पत्ति होती है। साधक के लिए निर्देश है-वह यथा समय, यथा उपयोग अनाकुल भाव से गतिशील हो।

7. अमूर्च्छित - मूर्च्छा का अर्थ मोह, लालसा या आसक्ति है। संयम-यात्रा के लिए अपेक्षित गमन साधक के लिए विहित अनुष्ठान है। इस गमन प्रवृत्ति के समय साधक की वृत्ति मूर्च्छा-रहित होनी चाहिए। जिसमें मूर्च्छा होती है, वही संभ्रान्त बनता है। गमन-समय में विविध शब्द-रूप आदि सामने आते हैं, उनमें लिप्त न होते हुए साधक केवल अपने अभिप्राय-सिद्धि हेतु गमन करे-यह निर्देश है।[21]

8. अनुद्विग्न-अनुद्विग्न का अर्थ है-परीषह से न डरने वाला, प्रशान्त। तात्पर्य की भाषा में-अनुकूल स्थितियां न मिलने के विचार से व्याकुल न होते हुए तथा तिरस्कार आदि परीषहों की आशंका से क्षुब्ध न होते हुए साधक गमन करे।[22]

9. अव्याक्षिप्त चित्त से- आर्त्तध्यान आदि चित्त की विक्षिप्तता के सूचक हैं। चलते समय चित्त में यदि आर्त्तध्यान है तो पैर उठाते समय पूरा उपयोग या भावक्रिया की आशा नहीं की जा सकती। गमन-योग में साधक आर्त्तध्यान से रहित अन्तः करण से, पैर उठाने में उपयोग युक्त होकर गमन करे-तभी गमन की प्रवृत्ति को सम्यक् प्रवृत्ति कहा जा सकता है।[23]

ईर्या की यतना

यतना अर्थात् संयम। इस एक शब्द में श्रामण्य का सार समाहित है। यतना पूर्वक गति का तात्पर्य है-आत्मा और संयम की विराधना का परिहार करते हुए चले। जिन-जिन मार्गों से जाने का निषेध है, अन्य मार्ग न होने की स्थिति में उन मार्गों से जाना अपेक्षित हो, तब गति उपयोग व संयम से इस प्रकार भावित हो कि आत्म-विराधना या संयम विराधना का प्रसंग न बनने पाए। गिरना, लड़खड़ाना आदि शारीरिक हानि आत्म-विराधना है। त्रस और स्थावर जीवों की हिंसा होती है, यह संयम-विराधना है, चारित्रिक हानि है।[24]

ईर्या समिति की यतना के चार आयाम हैं-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। काल व भाव के संदर्भ में चर्चा ऊपर हो चुकी। द्रव्य यतना का तात्पर्य है- जीव-जन्तुओं को देखकर चलना।

क्षेत्र यतना का तात्पर्य है- युग मात्र भूमि को देखकर चलना। युग शब्द का लौकिक अर्थ है- गाड़ी का जुआ, जो लगभग साढ़े तीन हाथ का होता है। मनुष्य का शरीर भी अपने हाथ से इसी प्रमाण का होता है। इसीलिए 'युग' का सामयिक अर्थ शरीर किया गया है। युग मात्र का अर्थ चार हाथ प्रमाण किया है।[25] यहां युग शब्द का प्रयोग दो अर्थों की अभिव्यक्ति के लिए है। इसके द्वारा ईर्या समिति के क्षेत्र-मान और उसके संस्थान-इन दोनों की जानकारी हो जाती है। युग शब्द गाड़ी से संबंधित है। गाड़ी का आगे का भाग संकड़ा और पीछे का भाग चौड़ा होता है। ईर्या समिति से चलने वाले साधक की दृष्टि का संस्थान भी यही बनता है।

यदि चलते समय दृष्टि को बहुत दूर डाला जाए तो सूक्ष्म शरीर वाले जीव देखे नहीं जा सकते और उसे अत्यन्त निकट रखा जाए तो सहसा पैर के नीचे आने वाले जीवों को टाला नहीं जा सकता। इसीलिए शरीर-प्रमाण क्षेत्र देखकर चलने की व्यवस्था की गयी है।[26]

सर्वतः युगमात्र भूमि को ग्रहण कर अर्थात् युग जितने क्षेत्र को लक्षित कर, भूमि को देखकर चलने का निर्देश भी कहीं-कहीं मिलता है। इसका तात्पर्य-थोड़ी दूर चल कर दोनों पार्श्वों में और पीछे अर्थात् चारों ओर युग मात्र भूमि को देखना है।[27]

विशुद्धि मार्ग में भी भिक्षु को युगमात्रदर्शी कहा हैं। साधक लोलुप स्वभाव को त्याग कर दृष्टि संयम के साथ गतिशील हो।[28] दृष्टि का संयम रोगों से बचाव व लोक मर्यादा-दोनों दृष्टियों से उपयोगी है। दृश्य जगत में रहते हुए प्राणी के लिए यह तो संभव नहीं है कि दृश्य उसके सामने न आए। दृश्य आदि विषय तो आएंगें, लेकिन उनके प्रति राग-द्वेष न किया जाए- यह शक्य है। पदार्थ ज्ञेय तक रहें तो समस्या नहीं होती। पदार्थ इन्द्रियों के साथ सन्निकर्ष, सामीप्य तक जाते हैं, तब पदार्थ के प्रति मनोज्ञ-अमनोज्ञ, राग-द्वेष का भाव पैदा होता है। इन्द्रियवशवर्ती मनुष्य नाना प्रकार के विकारों अथवा विचारों को प्राप्त होता है।[29] जो साधक इन्द्रियों के विषयों के प्रति विरक्त हैं, उसे उनकी मनोज्ञता या अमनोज्ञता नहीं सताती। उसमें समता का विकास होता है। समता की साधना से ही ध्यान सफल होता है, संकल्प-विकल्प समाप्त होते चले जाते हैं। फलतः तृष्णा क्षीण होती चली जाती है।

विहार-चर्या

गमन के संदर्भ में इस विस्तृत मीमांसा का उद्देश्य एक ही है- व्रतों को पीड़ा न हो।[30] साधक महापथ का पथिक बनता है। वह महाव्रत साधना का संकल्प स्वीकार करता है, तब ईर्या आदि समिति-गुप्ति रूपी माताओं का संरक्षण- संयोजन उसे प्राप्त होता है। इन्हीं की गोद में उसके संयम की साधना संवर्धित होती है।

गमन में विवेक न होने से, चित्त की चंचलता के कारण व्यक्ति ईर्या की शुद्धि नहीं कर पाता। उससे अहिंसा व्रत की पीड़ा होती है।[31]

वह इधर-उधर मनोज्ञ रूप को देखते हुए चलता है। दूसरे पूछते हैं, तब दृष्टि-दोष को छिपाना चाहता है। इस प्रकार सत्य-व्रत की पीड़ा होती है।

तीर्थंकरों ने श्रमण-साधक के लिए मनोज्ञ-अमनोज्ञ में उलझने का निषेध किया है। मनोज्ञ में आसक्त होने वाला उनकी आज्ञा का भंग करता है, इस प्रकार अचौर्य-व्रत की पीड़ा होती है।

मन भोग में लगे रहने से ब्रह्मचर्य व्रत पीड़ित होता है।

मनोज्ञ में ममत्व करने से उसके अपरिग्रह-व्रत की पीड़ा होती है।

इस तरह एक गमन संबंधी असावधानी से सभी व्रत पीड़ित-विनष्ट हो जाते हैं।

कहा जा सकता है- गमन का विवेक-पूरी विहार-चर्या के विवेक का प्रतीक है। अनिकेतवास, अल्पोपधि, शांत-सहवास आदि इसके सहज फलित हैं। ऋषियों की प्रशस्त विहाचर्या ईर्या समिति के रूप में संयम-शिशु का संपोषण देने वाली है।

इसकी सुरक्षा करने वाला अपने अस्तित्व की सुरक्षा कर लेता है, प्राणी मात्र के अस्तित्व को सुरक्षा, अभय प्रदान कर देता है। गति अधिक जीवंतता व लक्ष्य की स्पष्टता से जुड़ जाने से जीवन में धीरता-गंभीरता का आगमन स्वतः हो जाता है; आत्मा के आस-पास रहना, जीना स्वभाव बन जाता है। इस तरह महापथ का पथिक अपने स्वरूप की सम्प्राप्ति के साथ पथ-प्रभावना का माध्यम बन जाता है। हर यात्रा एक उठे हुए नन्हे-से कदम से शुरू होती है। वर्तमान के एक कदम में जागरूकता का समावेश करने से सिद्धि का स्रोत सहज संप्राप्त हो सकेगा।

शेषांश पृष्ठ 44 पर

सफर

- समणी सत्यप्रज्ञा

पूछा गया-

समंदर क्या है?
उत्तर मिला-
लहर पर लहर पर लहर पर लहर।

इसी तर्ज में
जब पूछा गया-
जीवन क्या है?
स्वर उभरा-
सफर पर सफर पर सफर पर सफर।

जिन्दगी नाम है-
चलने का,
पैर तो प्रतीक हैं,
चलते हैं अविराम,,
श्वास, विचार
भाव-अनुभाव।

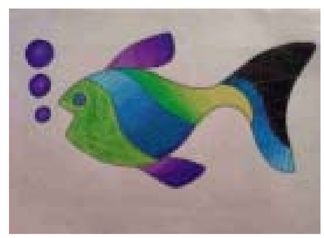

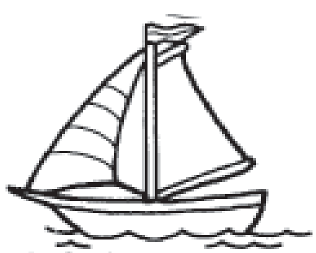

बन सकते हैं ये नाव
पहुंचाने पार
यदि हों-मन-वचन-काया
एकाकार, अविकार

जिस समय, जो करें,
उसी में दत्त-चित्त,
भीतर का संसार
यही है सार
प्रेक्षा का द्वार।।

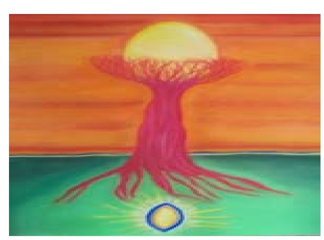

Mudra

Mukhya Niyojika Sadhvi Vishrutvibha

For the successful practice of Preksha Meditation, the body must be still. Posture is, therefore, an important part of Preksha Meditation. Any posture that produces discomfort or distraction is not conducive for the practice. An advanced practitioner may stand and those who have particular infirmities may lie down or sit in chairs. But a sitting posture is most commonly adopted. There are four common sitting postures:

1. *Padmaasan* (lotus position)
2. *Ardha-padmaasan* (half-lotus position)
3. *Sukhaasan* (simple cross-legged position)
4. *Vajraasan* (diamond position)

In addition to the position of the body, the position of the hands, the mudra is also very important. During Preksha Meditation, one of the following two mudras can be applied:

1. ***Gyan mudra* -** Let the back side of your right hand rest on your right knee and the left hand on the left knee. Let the index finger of each hand touch and slightly press the tip of the thumbs at the point of the contact. The other fingers should be kept spread out and straight.
2. ***Veetraag mudra* -** Turn both the arms inward at the elbows. First, keep the left palm in the center of your lap and then place the right palm on top of the left palm. Don't let your hands touch the ground. Avoid keeping your palms tilt downwards.

पाठकों से निवेदन

प्रेक्षाध्यान के आगामी अंक निम्न विषयों पर आधारित होंगे। रचनाकारों एवं लेखकों से अनुरोध हैं- वे निम्न विषयों को केन्द्र में रखकर अपनी रचनाएं प्रेषित करें।

	विषय	माह	भेजने की अंतिम तिथि
1.	ध्यान और संप्रेषण	जनवरी	15 दिसम्बर, 2011
2.	ध्यान और आजीविका शुद्धि	फरवरी	15 जनवरी, 2012
3.	ध्यान और विवेक	मार्च	15 फरवरी, 2012
4.	ध्यान और पर्यावरण शुद्धि	अप्रैल	15 मार्च, 2012

Walking on this path, And they lived happily ever after

Dr. Hansa Sancheti

Last half part of title sounds great. But life is not a movie where there will always be a happy ending or in other words a happy beginning. Life is a reality where every minute one has to struggle to survive, struggle to earn, struggle to sustain a relationship and struggle to be happy. We keep on dreaming that some day our struggle will come to an end, then the above phase '——and they lived———' will finally find its true meaning. But someone has rightly said –

"If I wait to be happy
I'll wait for ever
If I'm happy now
I'll be happy for ever".

Well Said, but how to apply. First we have to define happiness. Happiness is a state of mind, our reaction towards certain circumstances, our attitude towards our life and dealing with everyday problems. Now comes the million dollar question – What should we do to remain happy? The answer is simple – 'Just read your mental attitude.' By constant knowledge and practice of some simple steps we can not only clean our mind from the impurities, doubts, fears and negativity but also make it strong, positive, balanced and fully under our control. And once this happens then no person or circumstance can deprive us from our happiness.

Some simple formulas to be happy forever are as follows-

We should remember that our purpose in life is not to set other people right or punish them for their bad behavior or evil doings. Just leave it to their Karma.

Stop dreaming of future problems or mishappenings in life, face it as and when they come.

The only constant thing in the world is change. So however harsh life may be at present the future will always have something pleasant.

Don't wait for others to come and appreciate your work. Do that job yourself. Self-appreciation is more important.

Remember only a person, who has strength and will power, can adjust and compromise.

External circumstances cannot give us stress and tension unless they are backed by our emotional involvement. Try to be positive and don't let adverse circumstances. Take a ride on you.

Learn to say No. You are not a super-man so stop behaving like one. Aim at self development and not always on pleasing others.

Look at the word EGO in a positive manner. EGO means easy going. So just be cool. By adopting the above steps we can surely lead a stable and happy life forever.

आचार्य महाप्रज्ञ
एक शब्द : एक चित्र
असंसक्त
वह व्यक्ति
कितना धन्य है
जो
पदार्थ के साथ
जीता है,
उसका
उपयोग करता है
फिर भी
उसके
बंधन से मुक्त
रहता है।
वास्तव में
स्वतंत्र वही है,
जो संसक्त नहीं है।
वंदन-अभिनंदन
भीखमचंद-पृथ्वीराज बोथरा, श्रीडूंगरगढ़
तुलसी इलेक्ट्रीकल्स, दुकान नं.-2, सर्विस कॉम्पलेक्स, जी.आई.डी.सी.
पांडेसरा, सूरत-394221,फोन : (0261) 2693064, 2892279

आचार्य महाप्रज्ञ

एक शब्द : एक चित्र

अपूर्ण

सीमा में रहने वाला
मनुष्य
और सीमा में रहने वाला
पदार्थ।
हर वस्तु की सीमा
और हर वस्तु की अवधि।
पूर्ण
हमारे लिए
खोज का विषय है।
प्रत्यक्ष है
अपूर्ण।

वंदन-अभिनंदन

मनोज गुजरानी (सरदारशहर)
हाईटेक डायमंड टूल्स प्रा. लि., जे468, सीतापुरा औद्योगिक क्षेत्र,
टौंक रोड, जयपुर-302022, फोन : (0141) 2770082

आचार्य महाप्रज्ञ

एक शब्द : एक चित्र

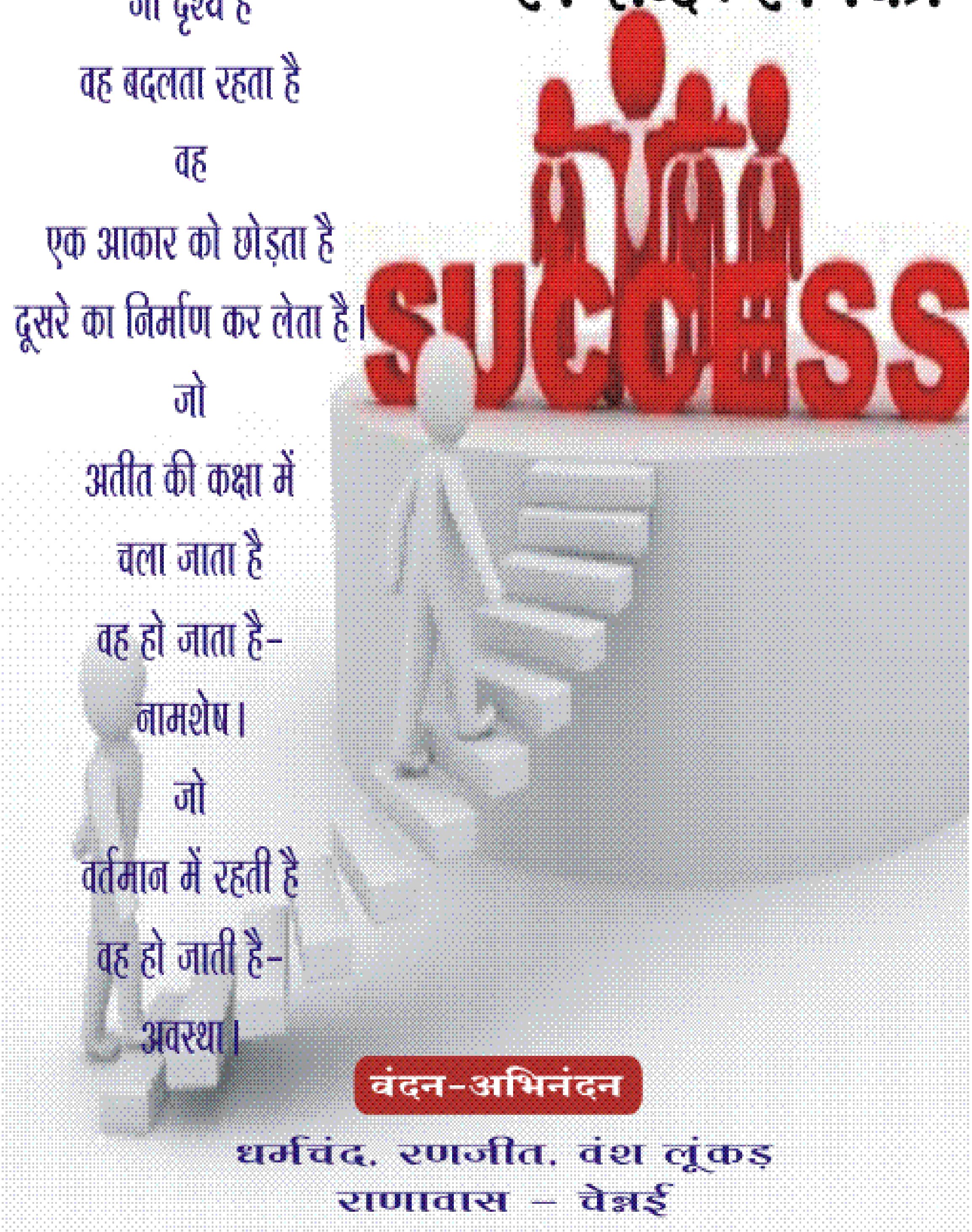

अवस्था

जो दृश्य है
वह बदलता रहता है
वह
एक आकार को छोड़ता है
दूसरे का निर्माण कर लेता है।
जो
अतीत की कक्षा में
चला जाता है
वह हो जाता है–
नामशेष।
जो
वर्तमान में रहती है
वह हो जाती है–
अवस्था।

वंदन-अभिनंदन

धर्मचंद, रणजीत, वंश लूंकड़
राणावास – चेन्नई

वंदन-अभिनंदन
कमल कुमार अंकित बुच्चा, श्रीडूंगरगढ़
श्री महावीर टिम्बर स्टोर्स, आसाम टिम्बर मार्केट, स्वर्ण पार्क-नांगलोई
दिल्ली-110041, फोन : (011-28342403)

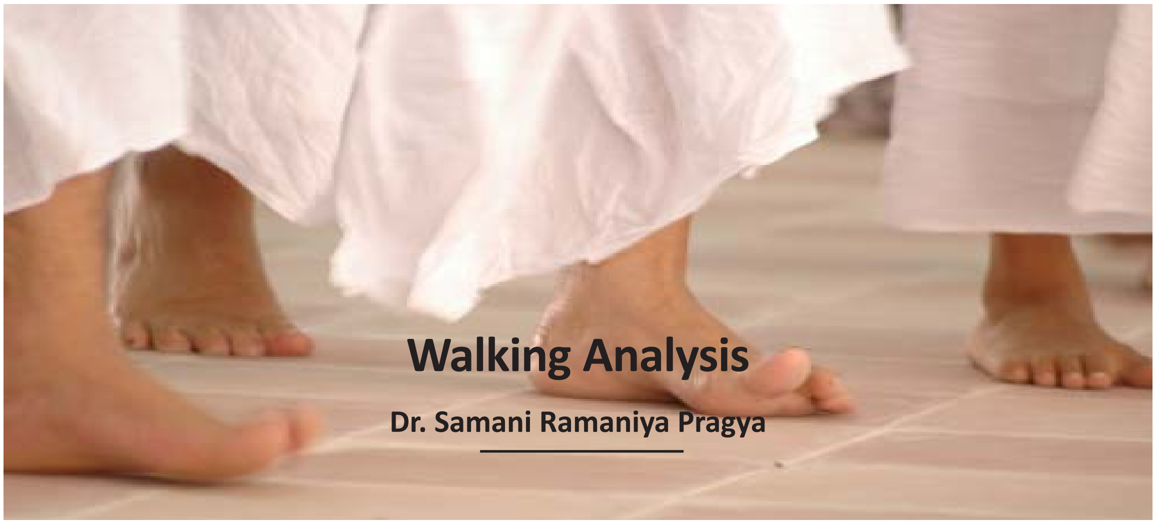

Walking Analysis

Dr. Samani Ramaniya Pragya

Lord Mahavira has propogated the eternal truth '***khanam janahi pandiye***'- Oh learned one! Be conscious of the present moment. Life is now hence we need to be conscious of every activity we perform. The concept of samiti in Jainism indicates towards this fact. To apply consciousness or awareness in all the acts we do is called as samiti. '***Samyak eti iti samiti***' proper movement is called samiti. Here the word ***samyak*** indicates right way of movement i.e. conscious movement. The first and the foremost, the most important samiti is ***Irya samiti.***

Irya samiti has broader implication. It is a jouney to go from mind to no mind. No-mind is the consciousness minus thought. In this stage body, feelings, perceptions, mental functioning and consciousness – all get dissolved in one. To be aware of all these five aggregates uniformly is irya samiti. A table, when percieved with its each part, we cannot recognise table in those parts. Only when we overlook the parts the whole reality would be disclosed to us. Similarly, when we concieve each aspect of our existense, distracted existence is found. Become one with walking. This is the actual meaning of *irya samiti*.

It is not only better practice to concentrate the mind but also to have higher benefits which am an aspirant has to realise. Few among them are as follows:

1. Bheda Vijnana [know eternal duality]- It implies finding your invisible and indestructible existence beyond the physical activities which we generally call 'I am'. In depth practice of irya samiti can help this realisation. Everlasting remembrance of true 'I' apart from body is *bheda vijnana.*

2. Prakampana Vijnana [know vibrations] - Connecting with your inner, subtle and vital body. We can feel those vibrations. When you deeply engross in yourself you will forget your external physical existence and one with the inner and subtle truths of the body. The most subtle bio-electrical or vital energy is felt in each point of the body.

3. Slowdown the Ageing Process [know to remain young]- When we walk with engrosseed conciousness and slow with deep breathing, we empower our immunity system and ultimately the process of ageing slows down. It is also process of powerful self healing meditation.

4. Creative Thinking [know to create a new world around]- It helps to trigger up our creative thinking. As our awareness with movement with walking enhaces the stillness of mind and by this stillness the centers of creative power located in brain gets activated. Understanding power develops with conscious walking.

Irya Samiti : Beyond Therapeutic Walking

Walking mediation is an integral part of meditative practices and is a form of meditation. Here awareness should be extended to include whatever posture the body is in.

Therapeutic walking

Therapeutic walking is not only a way to spiritual upliftment but also a medicine for our physical existense. Therapeutic walking is a major rehabilitative as well as preventive exercise.

On physical level, Therapeutic Walking is ultimately the easiest and safest solution for staying healthy. Here are some of the major benefits from conscious walking

1. Walking prevents or delays the onset of major problems
2. Walking lowers the biological age 10 to 20 years below the chronological age
3. Walking improves mood and self confidence
4. Walking helps rehabilitate from injuries caused by most dangerous sports
5. Walking lowers or eliminates your dependency on medications and addictive substances
6. Walking helps to lose weight and tones the body

Gary Yanker and Kathy Burton with a team of 50 medical experts revealed a fact that walking is a powerful therapeutic tool and best help you. In summary, it can **improve** sociability, creative energy, relaxation, optimism and awareness of details, intimacy with family and friends, self confidence, self image, concentration, assertiveness, feeling of independence, control over life, memory, and immune system.

Therapeutic Walking can **reduce** depression, addictive behavior, headaches, back aches and muscle tension, phobias, mood swings, emotional fatigue, ego centricity, boredom etc.

In conclusion, we can say therapeutic watchful walking can be recognised as a process of *Sharira Preksha*-an aspect of Preksha Meditation to some extent. Hence it paves the way to know your self than knowing about yourself. It inspires not to fight with the body but to create peace within every actvity of the body. It calls for the 'sermon on the body'. It helps to flood your body with conciousness.

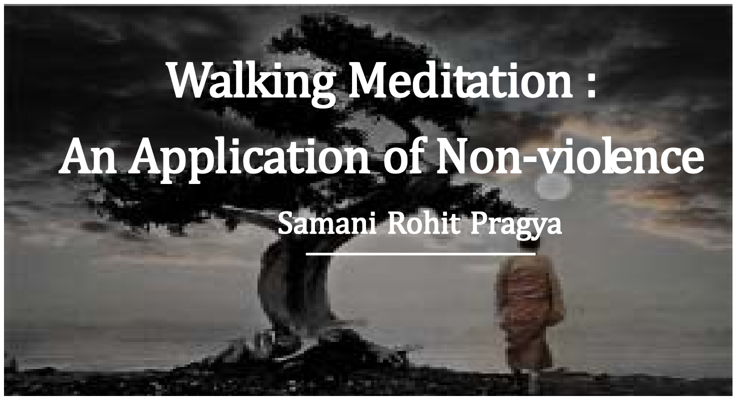

Walking Meditation : An Application of Non-violence

Samani Rohit Pragya

Jainism accepts five *mahavratas.* These are the root of right conduct. For the purity and protection of these vows there is a principle of *samiti* i. e. carefulness in activity and *gupti* i.e. self control. Five *samiti*s and three *gupti*s together termed as *asta pravacana mata* in Jain scripture.

Like astanga yoga of Patanjali, astanga marga of Buddhism and asta siddhi of Hathayoga, in Jainism there is asta pravacana mata, a spiritual path to get eternal happiness*. Samiti* and *gupti* take care of the *mahavratas* and *ratnatraya* (right knowledge, right faith and right conduct) of a monk like a mother and therefore they are named as *mata*. The concept of *samiti* implies discipline in every activities. It's purpose is to avoid all sorts of unpleasantness to the living beings without any exception while walking, speaking, taking food, keeping and receiving things releasing excreta etc. Disciplined walking is known as *irya samiti* in Jainism. An Ascetic should fix his faith in the i*rya*, identify himself with it, accord supreme importance to it, merge himself in the memory of it and completely dedicate himself to it. In other words, monk should walk with mindfulness which is be called as *gaman yog* or walking meditation. Though, concept of disciplined walking is explained for monks, lay man should also follow it to protect the soul from the sin of violence.

Undisciplined walking is a sinful activity. In his Yogasutra (3/1) Acarya Hemacandra says.

It means just as a heated ball of iron destroys living organisms, mobile or immobile where ever it is thrown, so also a person with undisciplined movement may cause harm to living beings. Disciplined walking is also helpful to build a good personality as well as to live a peaceful life.

There are three constituents of walking meditation, which can be presented as following equation:

Walking Meditation = slow walking ß silent walking ß straight walking

All of them together leads one into walking meditation.

Slow Walking

When walking is more like running one print anxiety and sorrow on earth. We should have to walk in a way that we only print peace and serenity on the earth. When we are able to take one stop peacefull and happily, we are working for the cause of peace and happiness for the whole of the being world, so we should be aware of the contact between our feet and

the earth. We can bring peace to the surface of earth by slow and proper speed. Personality of man is also decided through his speed of walking. Very slow walking gives the impression of lethargic personality, while very fast walking proves fickleness in personality. This fickleness of body also makes the mind unstable. *Irya samiti* therefore teaches to walk in normal speed.

2. Silent Walking

The word 'silent walking' refers two meanings; one is that while walking one should not make noise through feet by applying stress, the other is silent walking. One rule of *irya samiti* is 'not to talk while walking'. This rule should not be applied only on walking but also while driving. Walking meditation does not allow self talking too. While walking man should only walk then only it becomes a *bhav kriya*(activity done with mindfulness). Along with slow and silent walking, *irya samiti demands* straight walking too.

3. Straight Walking

A monk is advised to walk with looking a four cubit land *(yuga matra bhumi)* before him. Here straight walking means avoidance of looking in other directions. He should not see above and below while walking because it will cause the loss of concentration generating harm to small creatures.

The slow, silent and straight walking is a perscribed method of walking. It should be considered that developing the habit of disciplined walking or practicing walking meditation first, we will have to develop the compassion towards all living beings. This compassion only can make us careful for all small beings and their existence. Walking Meditation is nothing else other than an application of non-violence and compassion.

प्रसंग

शिष्य

एक गुरु ने देखा–उसके पांच शिष्य अपनी–अपनी साइकिलों पर बाजार से लौट रहे थे। वे साइकिलों से उतर कर गुरु को प्रणाम करने पहुंचे। गुरु ने पूछा–तुम सब साइकिल क्यों चलाते हो? पहले शिष्य ने उत्तर दिया–अक्सर मुझे आश्रम के लिए सामान लाना होता है। मुझे सामान पीठ पर न ढ़ोना पड़े, इसके लिए साइकिल उपयोगी है। गुरु ने उससे कहा–तुम बहुत होशियार हो। जब तुम बूढ़े हो जाओगे तो तुम्हें मेरी तरह झुककर नहीं चलना पड़ेगा। दूसरे शिष्य ने कहा–मुझे साइकिल चलाते समय पेड़ों और खेलों को देखना अच्छा लगता है। गुरु ने उससे कहा–तुम हमेशा अपनी आंखें खुली रखते हो और दुनिया को देखते हो। तुम अच्छे अवलोकन कर्ता हो। तीसरे ने कहा–जब मैं साइकिल चलाता हूं, तब मंत्रों का जाप करता रहता हूं। गुरु ने प्रशंसा के स्वर में कहा–तुम्हारा मन किसी नए कसे हुए पहिए की तरह रमा रहेगा। तुम अच्छे साधक हो। चौथे ने कहा–साइकिल चलाने पर मैं सभी जीवों में एकात्मकता का अनुभव करता हूं। गुरु ने प्रसन्न होकर कहा–तुम अहिंसा के पथ पर चल रहे हो। पाचवां शिष्य अपनी बात कहने से पहले थोड़ा सकुचाया। फिर भी कह दिया–मैं साइकिल चलाने के लिए साइकिल चलाता हूं। जब साइकिल चलाता हूं, और कोई बात मेरे सामने नहीं रहती। अपने शिष्य की बात सुनकर गुरु अपने आसन से उठे और उस शिष्य के चरणों के पास बैठ गए और बोले–मैं आपका शिष्य हूं।

जिज्ञासा आपकी : समाधान परम पूज्य का

प्रश्न - आवेग की स्थिति में ध्यान को कहां केन्द्रित करना चाहिए?

उत्तर - आवेग की स्थिति में श्वास पर ही ध्यान को केन्द्रित करना चाहिए। श्वास पर जैसे ही ध्यान केन्द्रित हुआ, आवेग को हमने विदाई दे दी। श्वास पर ध्यान जाते ही, श्वास शांत होने लग जाता है और श्वास के शांत होने का अर्थ है-आवेग की शांति। दूसरा प्रयोग है-हम नासाग्र पर ध्यान टिकाएं। नाक के अग्र भाग पर, नाक के नीचे जो होंठ है, जहां से श्वास आता है और जाता है, वहां मन को केन्द्रित करें। ऐसा करने पर श्वास अपने आप शांत होने लगता है। श्वास शांत होने के साथ-साथ आवेग भी अपने आप शांत होने लग जाते हैं।

प्रश्न - विभिन्न प्रकार की साधना-पद्धतियां हैं। किसी भी साधना पद्धति को स्वीकार कर आगे बढ़ सकते हैं क्या?

उत्तर - जहां साधना का प्रश्न है, वहां जैन या अजैन का भेद नहीं डाला जा सकता। साधना पद्धति शुद्ध अर्थ में साधना पद्धति ही है। अध्यात्म में यह भेद नहीं होता। यह भेद सांप्रदायिक होता है। बहुत लोगों को यह भ्रांति है कि जैन परम्परा में साधना की पद्धति, योग की पद्धति नहीं है। इसलिए जैन योग या जैन साधना पद्धति के बारे में कुछ बातें प्रस्तुत करनी पड़ रही हैं। अन्यथा अध्यात्म की गहराई में जाने वाले व्यक्ति के लिए यह कोई प्रश्न ही नहीं रहता। वहां जैन की साधना पद्धति है, वैष्णव की है या किसी तीसरे की है, ये सारे भेद विलीन हो जाते हैं। जहां दूध का प्रश्न है, वहां काली गाय का है, भूरी का है या लंगड़ी का है, यह प्रश्न समाप्त हो जाता है। वहां मात्र दूध का प्रश्न होता है। साधना का प्रश्न शुद्ध साधना का प्रश्न है। साधना की पद्धति में केवल यह देखना होता है कि किस आलम्बन से मन शांत हो रहा है। मन की पवित्रता बढ़ रही है और हमारा सहज अनुभव आगे विकसित हो रहा है, इस बात को मुख्यतया देखना होता है।

पद्धतियां अनेक हैं। सब व्यक्तियों के लिए एक पद्धति काम करे, यह बात भी नहीं है। रुचि भी अलग होती है और ग्रहण की क्षमता भी अलग होती है। पकड़ने की भावना भी अलग होती है और परमाणुओं का संयोग भी अलग प्रकार का होता है। शरीर-रचना की भिन्नता के साथ इन सारी बातों में भिन्नता आ जाती है। इस परिस्थिति में हमें केवल विचार यह करना है कि जहां साधना का प्रश्न है, वहां अन्ततः मुख्य साधना ही है। वह किसी भी शब्द से चिपकी हुई साधना नहीं है।

भगवान महावीर जैन नहीं थे। आज हम जैन हैं। महावीर किसी परम्परा में नहीं थे। किसी के शिष्य भी नहीं थे। उन्होनें स्वयं अनुभव किया। जो अच्छा लगा, उसका आचरण किया। उस समय भी अनेक पद्धतियां चालू थीं। पार्श्व की परम्परा के अनुयायी भी नहीं बने, श्रावक भी नहीं बने। यद्यपि वे उस कुल में जन्में थे परन्तु पार्श्व के अनुयायी नहीं बने। साधुओं के पास भी नहीं गए। धर्म भी नहीं सुना। जैसा उन्हें लगा, वैसा किया।

जिसका क्रम परिपक्व नहीं हो गया है, तब तक उसे किसी न किसी साधना पद्धति का आलम्बन लेना ही होगा। आगे चलकर उस पद्धति का नाम छूट जाएगा, बस सत्य पर चलता जाएगा। चलते-चलते जो भी पद्धति उसके मन में बैठ गयी, वह उसे सही दिशा में ले जाएगी।

छोटी सी पहल

अल्पीकरण

प्रस्तुति-समणी सत्यप्रज्ञा

प्रकृति के वैभव से ही किसी चीज का निर्माण होता है। अपनी ओर से प्रकृति का वैभव अधिक क्षतिग्रस्त न हो-इसके लिए प्रायोगिक रूप से कुछ बिन्दु आदेय हो सकते हैं-

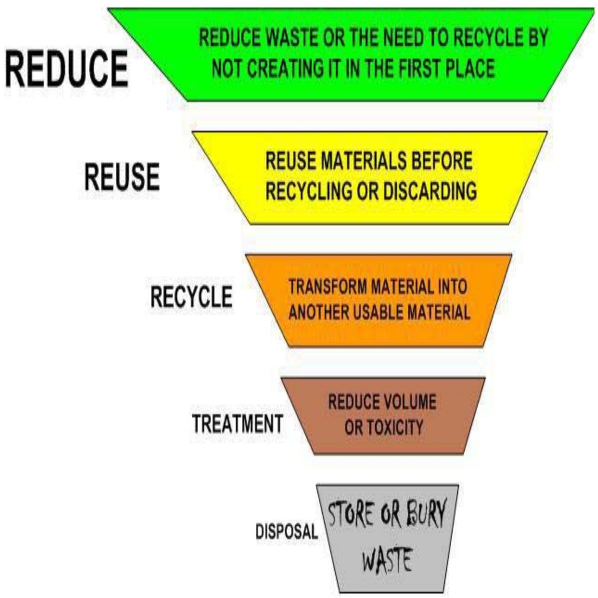

1. कागज के नैपकिन की जगह कपड़े के नैपकिन का उपयोग। 2. कागज का दोनों तरफ से उपयोग।

3. लिफाफे, पैंकिंग कागज आदि का जैसा संभव हो, पुनः उपयोग।

4. पुस्तक, पत्रिका, अखबार आदि का स्थानीय पुस्तकालय से पठन।

5. एक तरफा उपयोग किए गए पेपर का नोट्स आदि लेने में उपयोग।

6. कम से कम पैकेजिंग वाले पदार्थों को प्राथमिकता, अनावश्यक प्लास्टिक आदि के प्रयोग से बचाव।

जो चीजें नियमित उपयोग में नहीं आती, उनका अनावश्यक संग्रह न करें। इससे खरीदने की आदत पर भी विराम लगेगा। भविष्यकालीन अपव्यय भी नहीं होगा।

किसी चीज को खरीदने से पहले सोचें-क्या वास्तव में उसकी आवश्यकता है? अति आवश्यक न हो तो तत्काल न खरीदें-कुछ दिन बाद के लिए उसे टाल दें। वस्तु के प्रति भावना समय के साथ मुड़ जाएगी।

स्वेच्छा कृत सादगी व संयम की दिशा में बढ़ने के लिए महत्त्वपूर्ण मंत्र है- अल्पीकरण।

इसका उपयोग जीवन को उपयोगी बना देगा।

साक्षात्कार प्रेक्षा साधक से........

अध्यात्म के गहन प्रदेश में अनुप्रवेश का अवसर जिन्हें मिला है, भीतर और बाहर में ध्यान को जिन्होंने जीया है, उनमें एक नाम है-प्रेक्षा साधक, अणुव्रत सेवी, राष्ट्रीय अहिंसा प्रशिक्षक श्री बालू भाई पटेल का। उम्र के आठवें दशक में भी उनकी स्फूर्ति प्रेरणा है। प्रस्तुत है उनसे हुआ साक्षात्कार
(संपादक)

प्रश्न - 1. प्रेक्षाध्यान की साधना करने की प्रेरणा आपको कब व कैसे मिली?

उत्तर - 1976 में मुझे सदगुरू मिले। कबीर प्रणाली का ''मामयराम'', प्रेक्षाध्यान का अर्न्तयात्रा शब्द-सूरत के रूप में ध्यान बताया। मुझे मिलना है, मैं भीतर में मिलूंगा। जब समय मिले घर में (भीतर में) हाजिर रहना। सद्‌गुरू कृपा से 26-06-2003 उधना, तेरापंथ भवन में पहला मिलन हुआ। मैने गुजराती में खत लिखा था। खत पढ़कर मुस्कुराते हुए गुरुदेव ने कहा? अब तक कहाँ था? क्यूं संपर्क में नहीं आया? तुम्हें बहुत कुछ करना है? मेरे साथ रहना। मुझे अच्छा कार्यकर्ता मिला। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी की कृपा से 2003 में प्रेक्षा इन्टरनेशनल शिविर में भाग लिया। सूरत तेरापंथ भवन में तब से आज तक श्रद्धा भाव से जुड़ा हूं।

प्रश्न - 2. प्रेक्षाध्यान के किस क्षेत्र में आप विशेष साधना कर रहे हैं व क्यों?

उत्तर - साधना जीवन की सफलता के लिए आवश्यक है। भौतिक विकास एवं आत्म विकास के लिए प्रेक्षाध्यान बहुत बड़ा साधन है। साधन-साधना, अन्तर यात्रा से चेतना के अनुसंधान से ही सकारात्मक गुणों का विकास होता है। इन गुणों से ही पात्र की योग्यता बनती है। इसी दिशा में प्रयत्नशील हूँ।

प्रश्न - 3. व्यक्तिगत स्तर पर प्रेक्षाध्यान से आपको क्या-क्या लाभ हुए हैं एवं परिवर्तन आए हैं?

उत्तर - वर्तमान समय में जीवन शैली समस्याओं, उलझनों से भरी हुई है। समाधान स्थायी रूप से प्राप्त करने के लिये प्रयोगात्मक, आत्मीयता पूर्ण अभ्यास ही उपाय है। प्रेक्षाध्यान के अनेक उपायों से मुझ में मानसिक शांति, आध्यात्मिक विकास हुआ है। अन्तर यात्रा द्वारा चेतना के अनुसंधान के द्वार खुले है। आत्म कल्याण के साथ सेवा-यज्ञ, निष्काम, अनासक्त भाव से कार्य आज भी कर रहा हूं। अहंकार और क्रोध पर नियंत्रण हुआ है।

प्रश्न - 4. आपने प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों का प्रशिक्षण किस रूप में दिया है?

उत्तर - अणुव्रत समिति सूरत के अध्यक्ष के नाते व्यक्तिगत रूप एवं शिविरों के माध्यम से स्कूलों, कॉलजों एवं अन्य संस्थाओं से संपर्क किया। प्रशिक्षक के माध्यम से प्रायोगिक प्रशिक्षण दिलाया। स्थानीय शिक्षकों को भी प्रेक्षा ध्यान सिखाया। निरंतर प्रयोग चल रहे हैं।

प्रश्न - 5. प्रशिक्षण से किस वर्ग को सर्वाधिक लाभ पहुंचा है व क्यों?

उत्तर -प्रशिक्षण से बौद्धिक वर्ग, अध्यापक और विद्यार्थियों को सर्वाधिक लाभ पहुंचा है। इन लोगों से

जुड़ाव ज्यादा रहा है। विद्यार्थियों, शिक्षकों, नौकरी वालों और व्यापारियों को विशेष लाभ पहुंचा क्योंकि ये वर्ग ज्यादा सम्पर्क में रहें।

प्रश्न - 6. प्रेक्षाध्यान को और अधिक व्यापक बढ़ाने के लिए आपकी दृष्टि में क्या समुचित कदम हो सकते हैं?

उत्तर - ज्ञानशालाओं में प्रयोगों के माध्यम से बालकों को विद्या विकास के साथ जोड़ा जाये। अन्य शालाओं और कॉलेजों में प्रेक्षाध्यान के प्रयोग कराये जाये। प्रेक्षाध्यान पर शोध छात्रों को प्रोत्साहित किया जाये और व्यापक रूप से सभी विद्यालयों को जीवन विज्ञान, प्रेक्षाध्यान, योग प्रशिक्षण से लाभान्वित करने के लिए अधिक से अधिक प्रशिक्षक तैयार किये जाये।

प्रश्न - 7. चिकित्सकीय परिप्रेक्ष्य में प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों की उपादेयता के बारे में आपका क्या चिंतन हैं?

उत्तर - मानसिक रोगों से बचने का सबसे अच्छा उपाय है- प्रेक्षाध्यान। इसके प्रयोगों द्वारा अनेक शारीरिक, मानसिक एवं भावात्मक रोगों का इलाज हो रहा है। इस पर और प्रयोग कर अनुसंधान किए जायें। चिकित्सकीय क्षेत्र में शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक रोगों को ठीक करने में प्रेक्षाध्यान बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहा है। अनेक प्रशिक्षक, प्राईवेट और चिकित्सालयों के माध्यम से प्रेक्षा और योग थैरेपी दे रहे हैं।

प्रश्न - 8. इस साधना से जुड़ा कोई विशेष अनुभव या प्रसंग, जिसे आप पाठकों से बांटना चाहेंगे।

उत्तर - प्रेक्षाध्यान के प्रयोग से आत्मा- परमात्मा के अनुसंधान के साथ दीर्घश्वास 1 मिनिट से 3 से 4 घंटा तक पहुंच चुका हूँ। 6 से 8 घण्टा दिन भर में श्वास प्रेक्षा कर सकता हूँ। इस साधना से जुड़कर जीवन जीने की नयी दिशा मिली है। जीवन आनंद के साथ कैसे जीया जाये-ह इस साधना से जुड़कर अनुभव हुआ। पाठकों के लिए मैं कहना चाहूंगा कि प्रेक्षाध्यान से आप वह सब कुछ पा सकते हो जिसकी आपको आवश्यकता है। संक्षिप्त में प्रेक्षाध्यान पारस पत्थर है।

प्रश्न - 9. युवा पीढ़ी इस साधना पद्धति की ओर आकर्षित कैसे हो सकती है?

उत्तर - कोरा ज्ञान-विज्ञान से नहीं, बल्कि-संकल्प शक्ति के साथ प्रयोगात्मक पुरुषार्थ से युवा पाठकों को प्रोत्साहित किया जाय। अणुव्रत, जीवन विज्ञान, प्रेक्षाध्यान- तीनों एक रूप में खीर है। तीनों का समन्वय करके अणुव्रत और जीवन विज्ञान को प्रधानता देकर वास्तविक जीवन में आकर्षण लाया जा सकता है। कोरा विज्ञान कल्याण नहीं कर सकता। जीवन विज्ञान अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय है। यह युवा पीढ़ी के लिए विशेष लाभप्रद हैं। युवाओं केबीच इस के प्रयोग सिखलाये जाये एवं वैज्ञानिक आधार पर व्याख्या की जाये तो इस साधना पद्धति से युवा पीढ़ी जरूर जुड़ेगी और अपना तथा देश का भला करेगी।

प्रश्न - 10. नियमित रूप से प्रेक्षाध्यान से आप किस रूप में जुड़े हुए हैं?

उत्तर - वर्तमान में अणुव्रत समिति, सूरत के अध्यक्ष के रूप में विभिन्न विद्यालयों एवं कॉलेजों में प्रेक्षाध्यान का प्रयोग प्रशिक्षकों के द्वारा करवा रहा हूँ।

प्रश्न - 11. ध्यान के वे क्षण, जिन्हें आप कभी भुला न सकेंगे?

उत्तर - श्वास प्रेक्षा करते-करते कई बार मैं परमानंद में रम जाता हूँ। कई बार समय का ध्यान भी नहीं रहा, मैं कितना समय ध्यान में लीन रहा। प्रति क्षण-प्रति श्वास वर्तमान में रहने के लिए प्रेक्षाध्यान उत्तम शिक्षा है जो मुझे वर्तमान में रहने का आनंद देता है।

प्रश्न - 12. अब तक लगाएं गये शिविरों की अनुमानित संख्या?

उत्तर - लगभग 50 शिविर विविध संस्थाओं के साथ कई जगहों पर लगाए हैं।

प्रश्न - 13. प्रेक्षाध्यान के अभ्यासी वर्ग को विशेष सुझाव?

उत्तर - प्रेक्षाध्यान मानसिक, बौद्धिक, एवं आध्यात्मिक विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है। यह लोगों की समझ और मांग है। प्रेक्षाध्यान में कायोत्सर्ग का प्रयोग तनाव मुक्ति का महत्त्वपूर्ण उपक्रम है। श्वास प्रेक्षा मन को पकड़ने का सबसे सरल और सहज उपाय है यूं तो प्रेक्षाध्यान के हर प्रयोग का अपना विशेष महत्त्व है परन्तु कायोत्सर्ग और श्वास प्रेक्षा जल्दी से पकड़ में आने वाले प्रयोग है। इसे कोई भी सरलता से कर सकता है।

गुरु के हाथ में जीवन डोर

तेजकरण जैन सिपाणी (मंगलौर)

समाधान का नाम जीवन है। जीवन में कभी भी, कैसी भी, कहीं भी, कोई भी परिस्थिति आए, यदि गुरू के हाथ में जीवन डोर थमी है, तो समाधान को आना ही होता है। यह मेरी निजी अनुभूति है। इसी अनुभूति के कुछ प्रसंग यहां प्रस्तुत करना चाहूंगा।

1. सन् 2000 में मेरे व्यापार में कुछ व्यवधान आया। अहमदाबाद चार्तुमास में मैंने गुरुवर आचार्य श्री महाप्रज्ञ को निवेदन किया। गुरुदेव ने फरमाया- ''कुछ चिन्ता मत करो, प्रयोग करो, सब ठीक हो जायेगा''। आचार्यवर ने जय मुनि को निर्देश दिया-इसको यह मन्त्र दे दो। जय मुनि ने मुझे एक मन्त्र लिखवा दिया व कुलदीप मुनि ने सही जाप करने की विधि बतलाई। निष्ठा के साथ मैंने प्रयोग किया। गुरुवर कि कृपा से आज सब ठीक है। 2. आचार्य श्री महाप्रज्ञ का चातुर्मास भिवानी में था। भाद्रपद कृष्णा तीज को आचार्य श्री तुलसी की मासिक की पुण्य तिथी पर मैंने आचार्य श्री महाप्रज्ञ के दर्शन किये। मेरे मन में एक प्रश्न था-मै कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, कहाँ जाऊँगा। गुरुदेव ने मानो मेरे मन के प्रश्न को पढ़ लिया। गुरूदेव प्रवचन में पधारे और पूरा प्रवचन मेरे मन के प्रश्नों का समाधान देते हुए दिया। मेरे मन के प्रश्न का समाधान बिना पूछे ही हो गया। मध्याह्न में मैंने गुरुवर के दर्शन किये और भक्तिपूर्ण भावों से कृतज्ञता ज्ञापित की। साथ ही जिज्ञासा भी थी- ऐसा कैसे हो गया। पूज्यवर की स्नेहिल नजर मिली। शब्द मुखर हुए-'जब भीतर में भावना होती है, कहीं से कहीं पहुंच जाती है।' गुरुदेव महाप्रज्ञ की कृपा दृष्टि पाकर मैं निहाल हो गया। मैं जब भी दर्शन करता, उनकी अमृत वाणी से मझे असीमित मानसिक शान्ति एवं ऊर्जा प्राप्त हो जाती। मैं श्रद्धा प्रणत हूं।

प्रयोगों के प्रति निष्ठा बढी

साध्वी मंगलयशा

कहा जाता है- 'शरीर व्याधि मंदिरम्।' अर्थात् शरीर रोगों का घर है। पता नहीं, कब-कौनसा रोग उभर आएं और स्वस्थता में बाधा उपस्थित कर दे। मेरे स्वास्थ्य के संदर्भ में भी ऐसा ही कोई वेदनीय का योग आया और मैं माइग्रेन से ग्रसित हो गयी। लगभग 10 वर्षों तक यह पीड़ा का योग चला। आयुर्वेदिक, एलोपेथिक आदि अनेक उपायों का उपयोग किया पर कोई कारगर न हो पाया। माइग्रेन का अटैक होता, तब दर्द इतना भयंकर होता कि मूर्च्छा आना, दिखना बंद हो जाना-जैसी स्थिति भी हो जाती। इस रोग के कारण दैनिकचर्या में भी अनेक रूपों में बाधा आने लगी। लम्बी बीमारी ने मन को निराशा व तनाव से भर दिया। आचार्य श्री महाप्रज्ञ का सन् 2009 में श्रीडूंगरगढ़ में मर्यादा महोत्सव हुआ। हमें भी इस महोत्सव में पूज्यवर के सान्निध्य में आने का, सेवा-उपासना का सौभाग्यशाली अवसर मिला। दो महीने की गुरू-सन्निधि के बाद हमें

वहां से भीनासर के लिए प्रस्थान करना था। पाथेय प्राप्त करने के लिए हम पूज्यवर की सन्निधि में पहुंचे। कुछ क्षणों की उपासना के बाद गुरूदेव की दृष्टि मेरी ओर उठी और फरमाया-तुम्हारे सिर में दर्द रहता है- क्या प्रयोग किया? मैंने गुरूदेव से अपनी स्थिति निवेदित की। अयाचित कृपा-वर्षण करते हुए पूज्यवर ने फरमाया-कुछ महिनों तक शंखपुष्पी चूर्ण का उपयोग करो, साथ में समवृत्ति श्वास प्रेक्षा व उज्जायी प्राणायाम का प्रयोग करो। फिर देखना-तुम्हारे क्या होता है! आर्शीवाद की मुद्रा में दोनों हाथों को ऊपर उठाते हुए दो-तीन बार पूज्यवर ने ये शब्द दोहराए। इन शब्दों के साथ ही कोई ज्योति सी मेरे भीतर प्रवेश कर रही थी और मैं अभिभूत सी हो गयी। ऊर्जामय आर्शीवाद के साथ मंगलपाठ सुनकर हम मातृहृदया महाश्रमणी जी के सान्निध्य में पहुंचे। आशीर्वचन के साथ मंगल पाठ सुनाते हुए महाश्रमणी जी ने फरमाया-भीनासर जा रही हो, शक्तिपीठ पर अनुप्रेक्षा व ध्यान के प्रयोग करने से, संभव है कि तुम्हारा दर्द ठीक हो जाए। यह सुनते ही मेरी अग्रगण्या साध्वी श्री पानकुमारी जी ने फरमाया-इन शब्दों की गांठ बांध लो। शक्तिपीठ पर पहुंचते ही गुरूदेव व महाश्रमणी जी द्वारा, प्रदत्त प्रयोगों को शुरू किया। अब उस भयंकर दर्द से मैं प्रायः मुक्त हो गयी हूँ। कभी हल्का दर्द होता है, लेकिन प्रयोगों की निरंतरता से पूर्ण स्वस्थ हो जाऊंगी-ऐसी आशा है। प्रेक्षा के इन प्रयोगों ने मेरी निष्ठा को प्रयोगों के प्रति बढ़ाया है। मैं श्रद्धा प्रणत हूं पूज्यवरों के प्रति।

प्रसंग

जागृत शयन

गौतम बुद्ध के जन्म के समय राजा शुद्धोदन के महल में उत्सव मनाया जा रहा था। उस समय हिमालय पर निवास करने वाले असित नाम के एक महान ऋषि को जानकारी मिली कि शुद्धोदन के घर में एक दिव्य बालक ने जन्म लिया है। वे राजा के महल के द्वार पर पहुंच गए। राजा ने उन्हें आदर सत्कार से बिठाया, आशीर्वाद कर पधारने का कारण पूछा। असित ऋषि बोले-आपके घर जिस पुत्र का जन्म हुआ है, मैं उसे देखने के लिए आया हूं।

राजा ने उत्तर दिया कि बालक अभी सोया हुआ है, आप कृपया प्रतीक्षा करें।

ऋषि ने जो उत्तर दिया, वह सुनकर राजा चौंक उठे। ऋषि बोले-राजन! इस तरह की दिव्य विभूति देर तक सोती नहीं रहती। वह स्वभाव से जागरूक रहती है। उसी समय राजा को संकेत मिला कि बालक जाग गया है। बालक को ऋषि के सामने लाया गया। बालक को देखते ही ऋषि को ध्यान आया कि पूर्व में एक भविष्यवाणी हो चुकी है कि जिसके शरीर में गौतम की तरह बत्तीस महापुरुषों के लक्षण होंगे, वह गृह त्याग कर साधुता के मार्ग पर चलेगा, महान् ऋषि बनेगा।

बालक की ओर देखकर ऋषि रोने लगे। राजा ने रोने का कारण पूछा। ऋषि बोले-मैं बच्चे के लिए नहीं, अपने लिए रो रहा हूं। इसके जीवन में सदैव जागरण अवस्था रहेगी। यह बोधि-लाभ को प्राप्त होगा। लोक कल्याण के लिए अपना धर्मचक्र स्थापित करेगा। लेकिन उम्र हो जाने के कारण उस समय मैं इसका दर्शन नहीं कर सकूंगा। मैंने आज इसे जागते हुए देख लिया है, अतः मुझे संतुष्टि हो गयी है। जागरण जीवन है। वही सदैव इष्ट है।

प्रस्तुति- साध्वी डॉ. ललित रेखा (खाटू)

अनुभव के स्वर ...

गुवाहाटी में साध्वीश्री निर्वाणश्री के सान्निध्य में समुपस्थित चिकित्सकों के प्रेक्षाध्यान के संबंध में अनुभव

दिनचर्या में बदलाव

प्रेक्षाध्यान के प्रयोग- क्रम से गुजरने के साथ ही मेरी दिनचर्या में एक बड़ा परिर्वतन आया है। मैं रात को जल्दी सोने लगा हूँ तथा प्रातः जल्दी उठ भी जाता हूँ। इस व्यवस्थित क्रम से मेरे सभी दैनिक कार्य भी व्यवस्थित रूप से होने लगे हैं। सिरदर्द में काफी कमी आई है। सहजता से जीने की आदत बन रही है। मैं स्वयं को हल्का महसूस करता हूँ। **-डॉ विजय नाहटा(सर्जन)**

शांति का अनुभव

प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों से मुझे गहरी शांति का अनुभव हुआ है। मैं अपने क्रोध को नियंत्रित करने में सफल हो रहा हूँ। मेरा जीवन पूर्ण आनंद के साथ व्यतीत हो रहा है। मेरी निर्णायक शक्ति का विकास हो रहा है।

-डॉ सुभाष जैन (शिशु रोग विशेषज्ञ)

हल्केपन की अनुभूति

ध्यान के प्रयोगों से मैं स्वयं को हल्का और पहले से अच्छा अनुभव कर रहा हूँ। अपने क्रोध को नियंत्रित करने की कला भी मैंने ध्यान से सीखी है। मेरी तीव्र इच्छा है कि मैं प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों को विस्तार से सीखकर उन्हें अपने जीवन में आत्मसात करूं।

-डॉ सुरेश जैन (अध्यक्ष, जैन डॉक्टर फेडरेशन)

शरीर में नयी ताजगी

प्रेक्षाध्यान की कक्षा में आकर बहुत अच्छा लगा। मन व तन दोनों ही प्रफुल्लित रहने लगे हैं। इससे मन को शांति व तन को विश्राम मिलता है। मस्तिष्क में नयी ताजगी व नई स्फूर्ति का अनुभव हुआ है।

-श्रीमती रेणु जैन, गुवाहाटी

सिरदर्द से मुक्ति

पिछले कई दिनों मैं सिर में तीव्र दर्द महसूस कर रही थी। ऐसा लगता था कि कोई बड़ी बीमारी हो गयी है। ध्यान के नियमित प्रयोग से मैं कुछ ही दिनों में स्वयं को रोगमुक्त अनुभव करने लगी हूँ। मेरा पूरा दिन ताजगी और प्रसन्नता के साथ व्यतीत होता है।

-श्रीमती सायर नाहटा, गुवाहाटी

आनंद का अनुभव

प्रेक्षाध्यान के प्रयोग सीखकर मैं स्वयं में आनंद का अनुभव करने लगा हूँ। मुझमें अंतर्दर्शन की चाह जगी है। प्रेक्षाध्यान जैसे गहन विषय को बड़े ही सरल ढंग से यहां सिखाया गया। मैं दिन भर अपने आप को ऊर्जावान महसूस करता हूँ। अपने रोगियों को भी दीर्घश्वास के प्रयोग सिखा रहा हूँ। वे भी दर्द में राहत महसूस करने लगे हैं। **-डॉ दिलीप सेठिया (दन्त चिकित्सक)**

मुनि श्री धर्मेशकुमार जी के सान्निध्य में आयोजित (कांचीपुरम में) शिविर संभागियों के अनुभवः-

आत्मा से परमात्मा का सोपानः प्रेक्षाध्यान

प्रेक्षाध्यान के शिविर में करवाए गए ध्यान, अनुप्रेक्षा, कायोत्सर्ग, प्राणायाम, आसन, योगा आदि के प्रयोगों से मन की एकाग्रता का विकास हुआ और आत्मा से परमात्मा बनने का सोपान प्राप्त हुआ। दीर्घ श्वास प्रेक्षा और प्राणायाम के प्रयोग से शरीर में हल्कापन और स्फूर्ति का अनुभव हुआ। कार्य करने की क्षमता में अपेक्षाकृत वृद्धि हुयी है। विभिन्न शारीरिक बीमारियों यथा-डायबिटीज, दमा, एलर्जी, मोटापा आदि के निवारण के लिए भी प्रेक्षाध्यान के प्रयोग कारगर लगे। दीर्घ श्वास प्रेक्षा में स्वयं को देखने का अनुभव अभूतपूर्व रहा। यह ज्ञान हुआ कि आत्मा चैतन्य है, शरीर जड़ है। आत्मा का साक्षात्कार करना ही प्रेक्षाध्यान का मूल है।

मालादेव, लीलादेवी, तिण्डीवनम्

कर्म निर्जरा का माध्यमः प्रेक्षाध्यान

प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों से मुझे कर्म और आत्मा के बारे में जानकारी मिली। ध्यान की गहराई को जानने और समझने का मौका मिला। अनुप्रेक्षा के प्रयोगों से असीम शांति का अनुभव हुआ। कायोत्सर्ग करते समय कई बार सिर भारी हो जाता था किन्तु बाद में इसे कर्म निर्जरा का माध्यम मानकर हल्केपन की दिशा में आगे बढ़ी हूँ।

-सुगना सिसोदिया, कांचीपुरम

श्वास का ज्ञान

प्रेक्षाध्यान के शिविर में कायोत्सर्ग, ध्यान, अनुप्रेक्षा, शरीर-विज्ञान, आहार-विज्ञान की जानकारी दी गयी। श्वास के बारे में गहराई से बताया गया। श्वास शुद्धि के प्रयोग के साथ ही यह भी बताया गया कि लम्बे श्वास से हमारे शरीर का रक्त अस्सी प्रतिशत तक शुद्ध होता है जिससे अनेक रोगों का उपचार हो जाता है। मैं अपने को सौभाग्यशाली मानती हूं कि मुझे शिविर में संभागी होने का अवसर मिला।

-उषा बोहरा (कांचीपुरम)

सोलापुर में आयोजित प्रेक्षाध्यान शिविर के संभागियों के अनुभव

उपयोगी है प्रेक्षाध्यान

प्रेक्षाध्यान के प्रयोग तन और मन के लिए उपयुक्त लगे। ध्यान का महत्व समझ में आया। संपूर्ण शरीर तनावमुक्त हो गया। -शर्वरी औरंगाबादकर

मन की शांति

शिविर में करवाए गए प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि सरलता से, एकाग्रता से ध्यान करने से मन शांत होता है तथा तनाव दूर होता है। इससे हमें जरूर लाभ होगा।

-डा. छाया रघोजी (नेत्र विशेषज्ञ)

एकाग्रता का अनुभव

प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों से पूर्ण शांति व तनावमुक्ति का अच्छा अनुभव प्राप्त हुआ। चित्त की एकाग्रता का अनुभव हुआ तथा स्वयं को स्वयं देखने से मन आनंदमय होता है, ऐसा विश्वास हुआ।

-सौ. रोहिणी तडवलकर

अप्रतिम अनुभव

दीर्घश्वास के प्रयोग से एकाग्रता सध सकी। अन्तर्यात्रा के प्रयोग का अनुभव अप्रतिम रहा। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं कि यह शिविर निःसंदेह रूप से अत्यंत लाभदायी रहा।

-सुभाष देशपांडे

रास्ता मिला

इस शिविर में करवाए गए प्रयोगों का अनुभव अत्यंत विशेष रहा। इस शिविर में ध्यान की धारणा सिखी। मन को समाधान और शांति की एक दिशा मिली। स्फूर्ति का अनुभव हुआ तथा अच्छा जीवन जीने का रास्ता मिला।

-सौ. राज पालीवाल

प्रेक्षा का अभ्यास

अच्छे मार्गदर्शन और स्पष्ट शैली से यह समझाया गया कि ध्यान में कैसे जाएं? शांति से कैसे प्रयोग करें? आदि। मेरे व्यावहारिक जीवन में इसका निश्चित रूप से उपयोग होगा। मैं नियमित रूप से प्रेक्षाध्यान का अभ्यास करने की कोशिश करूंगी।

-डा. विद्या देशपांडे (बाल रोग विशेषज्ञ)

ध्यान-विधि का ज्ञान

प्रेक्षाध्यान के प्रयोग मानसिक तनाव को दूर करने में सहायक होंगे, ऐसा विश्वास जागृत हुआ है। इन प्रयोगों से मेरे स्वभाव में परिवर्तन आया है और मेरे दैनिक कार्यों को करने के तरीके में फरक पड़ा है। ध्यान की सही विधि का ज्ञान इस शिविर के माध्यम से हुआ।

-रोहिणी बावणै

समस्याओं से मुक्ति

मैं प्रेक्षाध्यान से पिछले 16-17 वर्ष से जुड़ी हुयी हूँ। जब आचार्य महाप्रज्ञ का चातुर्मास हेतु बम्बई आगमन हुआ, तब मैंने प्रेक्षाध्यान की प्रशिक्षिका का कोर्स किया। तत्पश्चात् साहित्य को पढ़ने तथा लोगों को सिखाने से और अधिक अनुभव हुआ। प्रेक्षाध्यान शुरू करने से पहले मुझे साइनस व माइग्रेन की काफी समस्या थी। ध्यान,शरीरप्रेक्षा, स्वास्थ्य की अनुप्रेक्षा से मेरी यह समस्या हल हो गयी। पहले मुझे छोटी-छोटी परेशानियाँ खूब व्यथित कर देती थी, पर अब ऐसा नहीं होता है। मैं मेरे घर के पास प्रेक्षाध्यान का प्रशिक्षण देती हूं जिससे महिलाओं को अनेक शारीरिक व मानसिक बीमारियों से मुक्ति मिली है।

-अर्चना जैन, नवी मुंबई

अप्रत्याशित परिर्वतन

मेरी पत्नी पिछले काफी समय से तनावग्रस्त थी। मैंने लगभग तीन महीने से उसके चेहरे पर हंसी की एक मुस्कान तक नहीं देखी। प्रेक्षाध्यान के प्रयोग करने के बाद मैंने उसमें अप्रत्याशित परिवर्तन देखा है। उसके आत्मविश्वास में वृद्धि हुयी है। प्रेक्षाध्यान के शिविर में करवाए गए प्रयोगों को करने के बाद हम लोगों के जीवन में बहुत बड़ा परिवर्तन आया है। मैं आभारी हूं।

-श्री राजेश बोथरा, दिल्ली

संतुलन

प्रसंग

नदी के पार कुछ लोग आए। नौका को छोड़ा और पूछा, गांव कितनी दूर हैं? लोगों ने बताया- चार मील। दो आदमी थे। एक के पास तो घोड़ा था, एक को पैदल चलना था। एक आदमी से पूछा-भई! सांझ तक पहुंचना है, पहुंच जाएंगे? बहुत समझदार आदमी था जिससे पूछा गया। उसने कहा-'धीमे-धीमे चलोगे तो पहुंच जाओगे।' अब जिसके पास घोड़ा था, वह धीमे क्यों चलता? जिसके पास घोड़ा नहीं था, वह धीमे चलने लगा। जिसके पास घोड़ा था, वह तेज दौड़ने लगा। चार मील का रास्ता, ऊबड़-खाबड़, पथरीला, कंटीला, झांड़-झंखाड़ और बीच-बीच में दलदल वाला। कीचड़, बहुत कीचड़। घोड़ा बहुत तेज दौड़ने लगा और आदमी, जो पैदल था, धीमे-धीमे चलते-चलते संभल कर चलने लगा। घोड़ा तेज रफ्तार से दौड़ा जा रहा है। चलते-चलते ऐसा दलदल आया कि घोड़े के पैर फिसले, घोड़ा गिरा, आदमी गिरा और उसी दलदल में उलझ गया। जो पैदल चल रहा था, वह बहुत संभल-संभल कर धीमे-धीमे चल रहा था, सांझ होते-होते अपने गांव पहुंच गया और घोड़े वाला दूसरे दिन सूर्योदय तक भी नहीं पहुंच पाया। गणित की भाषा तो यही है कि जिसके पास तेज गति वाला घोड़ा है, वह तो चार मील, दस-बीस मिनट, आधा घंटे में पहुंच जाएगा। जो आदमी पैदल चल रहा है, उसे तो चार मील पहुंचने में घंटा भर भी लग जाएगा। हम गणित की भाषा में सोचें तो घोड़े वाला पहले पहुंचेगा और पैदल चलने वाला बाद में पहुंचेगा, किन्तु हमारे जीवन की भाषा में सब जगह गणित नहीं चलता। गणित भी बहुत बार व्यर्थ हो जाता है। यथार्थ की भाषा में देखा जाए तो धीमे-धीमे चलने वाला तो पहुंच जाता है, और बहुत तेज चलने वाला लड़खड़ा जाता है, बीच में ही रुक जाता है। संतुलन स्वस्थता की निशानी है।

- आचार्य महाप्रज्ञ

बढ़ते चरण ....

जीवन विज्ञान संगोष्ठी

चुरू। आचार्य श्री महाश्रमण की सुशिष्या साध्वी श्री रामकुमारी के सान्निध्य में श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी उच्च माध्यमिक विद्यालय में जीवन विज्ञान की संगोष्ठी का आयोजन किया गया। साध्वी श्री ने जीवन विज्ञान की उपादेयता को स्पष्ट करते हुए विद्यार्थियों को जीवन विज्ञान के प्रयोगों से आवेश व आवेग रहित बनकर ज्ञान अर्जित करने का संदेश दिया। साध्वी श्री मयंकयशा ने कहा कि विद्यार्थियों के चहुंमुखी विकास के लिए मस्तिष्क के दोनों पटलों में संतुलन होना आवश्यक है। जीवन विज्ञान प्रभारी शिक्षक श्री अजय शर्मा एवं विजय शर्मा ने विद्यार्थियों को जीवन विज्ञान के प्रयोग करवाए। इस अवसर पर साध्वी श्री कीर्तिप्रभा, श्रीमती राशी देवी, श्री डूंगरमल कोठरी, पवन नाहटा, सुरेन्द्र पाठक, राजेश बांठिया आदि उपस्थित थे। अहिंसा प्रशिक्षक के. जी. मून्धड़ा ने विद्यार्थियों को व्यसन मुक्ति के संकल्प करवाए। कार्यक्रम का संचालन प्रेम सिंह राठौड़ ने किया।

अभिनव सामायिक अनुष्ठान में प्रेक्षाध्यान

हांसी। साध्वी श्री मधुरेखा के सान्निध्य में तेरापंथ भवन में भव्य सामूहिक सामायिक एवं एकासन अनुष्ठान आयोजित किया गया। इस अवसर पर साध्वी श्री मधुरेखा ने अर्हम् ध्वनि एवं सहिष्णुता की अनुप्रेक्षा के प्रयोग भी करवाए जिसे साधकों ने बड़ी तन्मयता से किए। इस अनुष्ठान में प्रत्येक आयु वर्ग के लगभग 200 धर्म प्रेमी भाई-बहिनों ने भाग लिया।

प्रेषक-अवधेश कुमार

दम्पत्ति शिविर में प्रेक्षाध्यान के प्रयोग

संगरूर। आचार्य महाश्रमण की सुशिष्या साध्वी श्री सुदर्शना श्री के सान्निध्य में दम्पत्ति शिविर आयोजित किया गया। साध्वी श्री सुदर्शना ने सभा को संबोधित करते हुए कहा कि पति-पत्नी परिवार के आधार स्तम्भ हैं, जिनके सहयोग और सामंजस्य पर परिवार का विकास निर्भर है। जहाँ सम्बंधों में श्रद्धा, सहयोग, समर्पण, विनम्रता, वात्सल्य और विश्वास के तत्त्व हैं, वहां सम्बन्धों में मधुरता और समरसता रह सकती है। साध्वी श्री पुनीतयशा ने ध्यान के प्रयोगों एवं अनुप्रेक्षा के प्रयोगों द्वारा सामंजस्य के सूत्र सिखाए। इस अवसर पर साध्वी श्री लक्षितप्रभा, डॉ आर. सी. जैन, तेयुप अध्यक्ष राहुल एवं मंत्री जितेन्द्र ने भी विभिन्न सत्रों में प्रशिक्षण दिया।

त्रिदिवसीय प्रेक्षाध्यान शिविर

आकोला। तेरापंथ महिला मंडल के तत्त्वावधान में आकोला में प्रथम बार समणी निर्देशिका निर्मलप्रज्ञा एवं समणी सौम्यप्रज्ञा के सान्निध्य में प्रेक्षाध्यान का त्रिदिवसीय शिविर आयोजित किया गया। इस शिविर में 40 महिलाओं ने भाग लिया। समणी निर्मलप्रज्ञा ने कहा कि चित्त की निर्मलता प्रेक्षाध्यान का लक्ष्य है। प्रत्येक व्यक्ति आत्मशुद्धि के माध्यम से समाधि प्राप्त करने के प्रयास करे तथा आधि, व्याधि व समाधि से मुक्त होने के प्रयास करे। प्रेक्षाध्यान की उपसम्पदा के पांच सूत्र हैं। भाव क्रिया, प्रतिक्रिया विरति, मैत्री, मिताहार व मौन का प्रयोग कर व्यक्ति अपनी जीवनशैली को परिवर्तित कर सकता है। चेतना के ऊर्ध्वारोहण हेतु समणी जी ने कार्योत्सर्ग व ज्योति केन्द्र प्रेक्षा के प्रयोग करवाएं। समणी सौम्यप्रज्ञा ने व्यक्तित्व निर्माण हेतु तनावमुक्ति, स्मरण शक्ति वर्धापन एवं आलस्य को मिटाने हेतु महाप्राण ध्वनि, कायोत्सर्ग एवं दर्शन केन्द्र प्रेक्षा के प्रयोग करवाए। महिलाओं को प्रेक्षा की दिशा में आगे बढ़ने का आह्वान उन्होंने किया। महिला मंडल की मंत्री श्रीमती सीमा एवं कन्या मंडल की नीरू ने भी अपने विचार रखे।

प्रेक्षावाहिनी का वार्षिकोत्सव

दिल्ली। साध्वीश्री यशोमती के सान्निध्य में विवेक विहार की प्रेक्षा वाहिनी का वार्षिकोत्सव मनाया गया। इस अवसर पर साध्वी श्री ने कहा कि प्रेक्षाध्यान स्वयं को जानने की महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। ध्यान में स्थिर हो जाने के बाद बाहर का प्रभाव नहीं रह जाता है। प्रेक्षाध्यान के सतत् अभ्यास से जीवन में असली आनन्द प्राप्त होता है। साध्वी श्री जिनयशा ने प्रेक्षाध्यान के विभिन्न प्रयोग-दीर्घ श्वास प्रेक्षा, अनुप्रेक्षा, ध्यान आदि के प्रयोग करवाए। जैन विश्व भारती के सहमंत्री श्री अरविंद गोठी ने प्रेक्षावाहिनी के बारे में विस्तार से जानकारी देते हुए संयोजक राज गुनेचा एवं प्रशिक्षकों को साधुवाद दिया। इस अवसर पर साध्वी श्री रचना श्री एवं श्री सुखराज सेठिया ने भी विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम का संचालन श्रीमती राज गुनेचा ने किया।

प्रेषक -सुखराज सेठिया

महाविद्यालय में प्रेक्षाध्यान व जीवन विज्ञान

खेड़ब्रह्मा (गुजरात)। विद्यार्थियों में नैतिक संस्कारो के विकास हेतु तथा सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास के लिए समणी विनीतप्रज्ञा एवं समणी जगतप्रज्ञा के सान्निध्य में ठक्कर आर्टस एण्ड के. जी. कॉमर्स कॉलेज में प्रेक्षाध्यान व जीवन विज्ञान का कार्यक्रम आयोजित किया गया। शिक्षा के अभिनव उपक्रम जीवन विज्ञान की चर्चा करते हुए समणी जी ने बताया कि आधुनिक शिक्षा पद्धति की समस्याओं का समाधान जीवन विज्ञान में है। यह शिक्षा पद्धति शारीरिक और बौद्धिक विकास के साथ-साथ आध्यात्मिक और भावनात्मक विकास पर बल देकर सर्वांगीण व्यक्तित्व के विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। समणी जी ने कहा कि सैद्धान्तिक शिक्षा के साथ प्रायोगिक शिक्षा से जोड़कर विद्यार्थियों में नकारात्मक विचार, मानसिक चंचलता, आवेग, आवेश, निराशा, असहिष्णुता आदि पर नियंत्रण किया जा सकता है। समणी जगतप्रज्ञा ने क्रोध नियंत्रण के लिए दीर्घ श्वास प्रेक्षा तथा एकाग्रता व स्मरण शक्ति के विकास हेतु महाप्राण ध्वनि के प्रयोग विद्यार्थियों को करवाए। प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों की वैज्ञानिकता बताते हुए समणी जी ने कई जीवनोपयोगी सूत्रों का प्रशिक्षण दिया। इस अवसर पर अमृत सांसद श्री शंकरलाल जी पितलिया, प्रधानाचार्य एन. डी. पटेल आदि उपस्थित थे।

प्रेषक-शंकर जैन

प्रेक्षाध्यान शिविर का आयोजन

रोहतक। साध्वी श्री शुभवती के सान्निध्य में स्थानीय तेरापंथ भवन में जैन श्वेताम्बर तेरापंथ सभा एवं महिला मंडल के संयुक्त तत्त्वावधान में त्रिदिवसीय प्रेक्षाध्यान शिविर का आयोजन किया गया। इस शिविर में बुद्धिजीवी वर्ग के लगभग 60-70 भाई-बहिनों ने भाग लिया। शिविरार्थियों को संबोधित करते हुए साध्वी श्री ने कहा कि प्रेक्षाध्यान का अर्थ है-देखना। आत्मा के द्वारा आत्मा को देखना। इसके लिए श्वास का ज्ञान होना आवश्यक है। श्वास का संबंध शरीर और आत्मा दानों से है। साध्वी श्री ने श्वास प्रेक्षा को समझाकर उसके प्रयोग करवाए तथा आहार विज्ञान को समझाया। इस शिविर में प्रेक्षाध्यान के प्रशिक्षक डा. एस. के. जैन व श्रीमती संतोष जैन ने शिविरार्थियों को ध्वनि, दीर्घ श्वास-प्रेक्षा, शरीर-प्रेक्षा, ज्योति केन्द्र-प्रेक्षा, कायोत्सर्ग, आसन-प्राणायाम, शरीर विज्ञान आदि का प्रशिक्षण दिया। प्रशिक्षकों ने प्रेक्षाध्यान की विस्तृत जानकारी शिविरार्थियों को दी। इस अवसर पर चातुर्मास काल में प्रत्येक रविवार प्रेक्षाध्यान कार्यक्रम चलाने का निर्णय लिया गया। इस शिविर में साध्वी संवरप्रभा, साध्वी सम्पूर्णयशा व साध्वी गौरवयशा का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

प्रेषक-डा. एस. के जैन

दुःख मुक्ति का श्रेष्ठ साधनः प्रेक्षाध्यान

नई दिल्ली। अध्यात्म साधना केन्द्र, तेरापंथ भवन में पांच दिवसीय प्रेक्षाध्यान आवासीय शिविर प्रेक्षा प्रभारी मुनि श्री जयकुमार के सान्निध्य में आयोजित किया गया। इसमें लगभग 65 लोगों ने भाग लिया। शिविर संभागियों को संबोधित करते हुए मुनि जयकुमार ने कहा कि-ध्यान, दुःख मुक्ति का सशक्त उपाय है। चूंकि ध्यान का उद्देश्य चित्त का शुद्धिकरण है और जब तक चित्त की शुद्धि नहीं होती तब तक दुःख से मुक्ति नहीं मिलती। ध्यान यथार्थ चेतना को जगाने का एक माध्यम है। जैसे-जैसे यथार्थ चेतना जागृत होगी- वैसे दुःख कम होता चला जाएगा। यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति ध्यान की प्रक्रिया से ही संभव है। इस शिविर में मुनि श्री जय कुमार ने ध्यान का गहन प्रशिक्षण दिया। मुनि श्री रोहित कुमार व मुनि श्री मुदित कुमार ने मानसिक शांति एवं एकाग्रता बढ़ाने के प्रयोग करवाए। साधना केन्द्र के स्वामी धर्मानंद ने ध्यान, प्राणायाम एवं अनुप्रेक्षा के प्रयोग करवाए। प्रेक्षा प्रशिक्षक रमेश कांडपाल एवं साधना केन्द्र के अनेक प्रशिक्षकों ने यौगिक क्रियाओं, आसन, कायोत्सर्ग, अनुप्रेक्षा आदि के प्रयोग शिविरार्थियों को करवाए। शिविर की व्यवस्थाओं में दक्षिण दिल्ली सभा के अध्यक्ष श्री जोधराज बैद, शान्ति जैन, गोविन्द बाफना आदि का सहयोग रहा। श्री अरविद गोठी, सुशील कुहाड़, संजय चोरड़िया, हरीश आंचलिया, मनोज खटेड़, अरविन्द दूगड़ आदि कार्यकर्ताओं का शिविर संचालन में सहयोग रहा। शिविर की संयोजना में श्री सुखराज सेठिया की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही।

प्रेषक-सुखराज सेठिया

प्रेक्षाध्यान से क्रोध का शमन

नोखा। आचार्य महाप्रज्ञ की अनुपम देन प्रेक्षाध्यान के महत्त्व को उजागर करते हुए साध्वी श्री काव्यलता ने कहा कि प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों के नियमित अभ्यास से तनावमुक्त जीवन जीया जा सकता है व क्रोध पर नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है। साध्वी श्री सुरभिप्रभा ने अर्हम् की ध्वनि का उच्चारण करवाते हुए कायोत्सर्ग व रंगों का ध्यान करवाया। इस अवसर पर तेरापंथ महिला मंडल, तेरापंथ सभा एवं तेरापंथ कन्या मंडल के सदस्य उपस्थित थे।

प्रेषक-इन्द्रचंद बैद

संस्कार निर्माण शिविर का आयोजन

जोरहाट। जैन भवन के प्रांगण में ज्ञानशाला के बच्चों का संस्कार निर्माण शिविर का आयोजन किया गया। उपासिका सरोज देवी भंसाली ने कहा कि ज्ञानाशाला संस्कार निर्माण का सर्वश्रेष्ठ उपक्रम है। उन्होंने जीवन विकास के सूत्र बताते हुए प्रेक्षाध्यान के प्रयोग करवाए। महिला मंडल की अध्यक्षा श्रीमती प्रभा देवी दूगड़ ने अच्छी-बुरी आदतों के बारे में बताया।

प्रेक्षाध्यान कार्यशाला का आयोजन

कोटा। तेरापंथ महिला मंडल द्वारा आयोजित प्रेक्षाध्यान कार्यशाला के संभागियों को संबोधित करते हुए मुनि रमेश कुमार ने कहा कि प्रेक्षाध्यान की साधना से सर्वांगीण व्यक्तित्व का निर्माण होता है। यह एक ऐसी योग पद्धति है जिसमें अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय है। इसके नियमित अभ्यास से व्यक्ति का जीवन बदलता है तथा आवेग-आवेश शांत होते हैं। मुनि श्री चैतन्य कुमार ने कहा कि ध्यान वह रक्षा कवच है जिसके द्वारा व्यक्ति अनेक प्रकार के अनिष्टों से स्वयं को बचा सकता है। इस अवसर पर मुनि श्री रमेश कुमार ने प्रेक्षाध्यान के प्रयोग करवाए। प्रेक्षा प्रशिक्षक किशनलाल सेठिया ने कायोत्सर्ग के प्रयोग करवाए। मुंबई से समागत उपासिका श्रीमती प्रतिभा चौपड़ा ने ध्यान एवं प्रेक्षा योगासन के बारे में जानकारी व प्रशिक्षण दिया। कार्यक्रम का संयोजन श्रीमती कुसुम जैन ने किया।

प्रेषक-प्रहलाद सिंह

प्रेक्षाध्यान शिविर की आयोजना

कोलकाता। आचार्य श्री महाश्रमण की विदुषी शिष्या साध्वी श्री कनकश्री एवं साध्वी श्री मधुलता के निर्देशन में साउथ कलकत्ता तेरापंथ भवन में दो दिवसीय प्रेक्षाध्यान शिविर आयोजित किया गया। साउथ कलकत्ता तेरापंथी सभा एवं तेरापंथ महिला मंडल के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित इस शिविर में 115 भाई-बहिन संभागी बनें। सभा के अध्यक्ष श्री सुरेन्द्र दूगड़ एवं महिला मंडल की अध्यक्षा श्रीमती कमला छाजेड़ ने सभी का स्वागत किया। साध्वी श्री कनकश्री ने शिविरार्थियों को निर्धारित विषयों पर संबोधन प्रदान करते हुए प्रेक्षाध्यान को समग्र व्यक्तित्व विकास का साधन बताया। मुख्य प्रशिक्षक श्री रणजीत दूगड़ ने कायोत्सर्ग, ध्यान, मैत्री की अनुप्रेक्षा आदि प्रयोगों के साथ-साथ ध्यान क्या?, ध्यान क्यों? आदि विषयों पर पावर पाइन्ट के द्वारा प्रस्तुति दी। राजेन्द्र सुराणा, श्रीमती सुनीता सेठिया व श्रीमती वीणा श्यामसुखा ने योगासन व ध्यान के प्रयोग करवाए। श्रीमती सुनीता नाहटा ने मनोरोगों के कारण व निवारण तथा प्रदीप चौपड़ा ने प्रेक्षाध्यान से नशा मुक्ति विषय पर विस्तार से जानकारी दी। इस शिविर के विभिन्न सत्रों का संचालन श्री विनोद बैद एवं श्रीमती कल्पना बैद ने किया। शिविर की सफल संयोजना में भंवरलाल बैद, सुरेन्द्र बोरड़, महावीर दूगड़, सुरेन्द्र सेठिया, श्रीमती चंपा कोठारी, जतन बांठिया आदि का सहयोग रहा।

प्रेषक-प्रकाश दूगड़

पंचदिवसीय प्रेक्षाध्यान शिविर

बैंगलोर। साध्वी श्री संगीत श्री के सान्निध्य में तेरापंथ महिला मंडल के द्वारा पंचदिवसीय प्रेक्षाध्यान शिविर आयोजित किया गया। शिविर के उद्घाटन में शिविरार्थियों को संबोधित करते हुए साध्वी श्री संगीत श्री ने कहा कि-प्रेक्षाध्यान आचार्य महाप्रज्ञ की विशिष्ट देन है। इस ध्यान पद्धति के आलंबन से समाज सुखी, स्वस्थ व शांतिपूर्वक रह सकता है। इस शिविर में साध्वी श्री शांतिप्रभा, साध्वी श्री कमल विभा एवं साध्वी श्री मुदिताश्री ने शिविर के विभिन्न सत्रों में प्रशिक्षण दिया। प्रतिदिन शिविर का प्रारंभ प्रशिक्षक एस. के. जैन द्वारा ब्रह्म मुहूर्त में ध्यान से होता था। तत्पश्चात प्राणायाम, योगासन, कायोत्सर्ग आदि की क्रियाएँ करवायी जाती। श्रीमती संतोष रानी ने कायगुप्ति के विभिन्न प्रयोग करवाए व प्रेक्षाध्यान के विविध आयामों की जानकारी दी। प्रशिक्षक डा. मोहनलाल जैन ने आहार-विज्ञान का विस्तृत प्रशिक्षण शिविरार्थियों को दिया। प्रेक्षा प्रशिक्षक श्री माणकचंद रांका ने डाइबिटीज, ब्लड प्रेशर एवं किडनी संबंधी रोगों के निवारण के संबंध में प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों का प्रशिक्षण दिया। प्रशिक्षक सहयोगी श्री मांगीलाल छाजेड़, श्री पंकज शर्मा, ज्योति जैन ने सहिष्णुता, अभय, मृदुता की अनुप्रेक्षा के प्रयोग करवाए तथा आसन, प्राणायाम के साथ कुंजल व नैति क्रिया भी करवायी। इस शिविर की समायोजना में तेरापंथ सभा, तेरापंथ युवक परिषद, तेरापंथ महिला मंडल एवं अन्य सहयोगी संस्थाओं का भरपूर सहयोग रहा।

प्रेषक-बिन्दु रायसोल

प्रेक्षाध्यान के विविध कार्यक्रम

जयपुर। नवनिर्वाचन के पश्चात जयपुर महिला मण्डल के द्वारा साध्वी श्री रामकुमारी के सान्निध्य में प्रेक्षाध्यान के विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए। प्रतिदिन व्याख्यान के पश्चात श्रीमती प्रेम बोथरा व श्रीमती सरोज घीया के द्वारा कायोत्सर्ग के प्रयोग करवाए जाते हैं। प्रशिक्षिका श्रीमती प्रेम बोथरा ने स्मृति विकास हेतु ध्यान, महाप्राण ध्वनि के प्रयोग करवाए। इसी के साथ आयुर्वेदिक, होम्योपेथिक, एक्युप्रेशर आदि चिकित्सा पद्धति का भी परिचय दिया।

प्रेषक-राजश्री बैगानी

जीवन विज्ञान शिक्षक प्रशिक्षण शिविर

भिलाई। आचार्यश्री महाश्रमण की सुशिष्या समणी निर्देशिका जिनप्रज्ञा के सान्निध्य एवं केन्द्रीय जीवन विज्ञान अकादमी, जैन विश्व भारती, लाडनूँ के निर्देशन में छः दिवसीय जीवन विज्ञान शिक्षक प्रशिक्षक शिविर का आयोजन शिक्षा विभाग, दुर्ग जिला, दुर्ग (छ.ग.) एवं जिला जीवन विज्ञान अकादमी, दूर्ग, भिलाई के संयुक्त तत्त्वाधान में पोरवाल प्रेक्षा भवन, नेहरू नगर, भिलाई में आयोजित किया गया। शिविर में जिला दुर्ग के आठों खण्डों से 47 अध्यापक-अध्यापिकाओं ने भाग लिया व जीवन विज्ञान का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक प्रशिक्षण प्राप्त किया। शिविरार्थियों को सम्बोधित करते हुए समणी जिनप्रज्ञा ने कहा कि शिक्षक समाज की धरोहर होता है। स्वस्थ समाज रचना की दिशा में शिक्षक का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है, अतः हमारा यह दायित्व है कि हम बालकों का सर्वांगीण विकास करें। इस दिशा में जीवन विज्ञान, शिक्षा की पूरक पद्धति के रूप में हमारे सामने है। जिला शिक्षा अधिकारी श्री बी.एल. कुर्रे ने शिविर आयोजन के संदर्भ में जिला जीवन विज्ञान अकादमी, दुर्ग-भिलाई एवं केन्द्रीय जीवन विज्ञान अकादमी के प्रति आभार प्रकट करते हुए बताया कि दुर्ग जिले के अनेक विद्यालयों में पहले से ही प्रार्थना सभा में जीवन विज्ञान की गतिविधियों का संचालन हो रहा है। पोरवाल चेरीटेबल ट्रस्ट के मुख्य ट्रस्टी श्री दानमल पोरवाल द्वारा दुर्ग जिले के शिक्षकों के लिए 'जीवन विज्ञान क्लब' के गठन का प्रस्ताव एवं परिकल्पना प्रस्तुत की गई। इसका स्वागत करते हुए सभी शिक्षकों ने सहर्ष स्वीकार किया। प्रशिक्षण के क्रम में समणी निर्देशिका जिनप्रज्ञा, समणी नूतनप्रज्ञा, केन्द्रीय जीवन विज्ञान अकादमी के सहायक निदेशक हनुमानमल शर्मा एवं जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय के उज्जैन केन्द्र के समन्वयक मुकेश मेहता ने आसन, प्राणायाम, जीवन विज्ञान से व्यक्तित्व विकास, जीवन विज्ञान इकाई परिचय, कायोत्सर्ग एवं अनुप्रेक्षा के सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक प्रशिक्षण के साथ प्रार्थना सभा में जीवन विज्ञान का प्रशिक्षण प्रदान किया। शिविर व्यवस्था के क्रम में जिला जीवन विज्ञान अकादमी, दुर्ग-भिलाई के अध्यक्ष विजय बोहरा, मंत्री निर्मल जैन, प्रकाशचन्द बरमेचा, किशोरीलाल कोठारी, ते.यु.प. के संजय बरमेचा, राजेश जैन, सुरेश कुमार बरड़िया सहित जैन श्वेताम्बर तेरापंथ सभा एवं महिला मण्डल का महत्त्वपूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ। **प्रेषक-हनुमानमल शर्मा**

शेषांश पृष्ठ 19 का

संदर्भ-

1. दसवेआलियं, वाचना प्रमुख-आचार्य तुलसी, विवेचक-सं.-मुनि नथमल, जैन विश्व भारती, लाडनूं, दूसरा सं.-1974, (पहला सं.-1964), अ.4.7, पृ.115
2. उत्तरज्झयणाणि, वाचना प्रमुख-आचार्य तुलसी, विवेचक-सं.-युवाचार्य महाप्रज्ञ, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं, दूसरा संस्करण-1993, भाग-2, अ. 24.4-7
3. वही, 24.8, भाग-2, पृ. 70, 4. वही, अ.22.26
5. श्री भिक्षु आगम विषयकोश, भाग-2, वाचना प्रमुख-गणाधिपति तुलसी, प्रधान सं.-आचार्य महाप्रज्ञ, निर्देशन-मुनि दुलहराज, सं.-साध्वी विमलप्रज्ञा, साध्वी सिद्धप्रज्ञा, जैन विश्व भारती, लाडनूं, 2005, पृ-509
6. श्रीमद् भगवद् गीता
7. तुलसी, गणाधिपति, अर्हत्-वाणी, आदर्श साहित्य संघ, चुरू, 1996, पद-73, पृ. 34
8. 'आनंद भावना', प्रेक्षाध्यान : दर्शन और प्रयोग, आचार्य महाप्रज्ञ, जैन विश्व भारती, लाडनूं, 2011, पृ. 89
9. उत्तरज्झयणाणि, 24. 5, 10. वही- भाग- 2, पृ-61
11. दसवेआलियं- 5.1, 4-6, 12. वही- 5.1.18
13. वही- 5.1.12, 14. वही- पृ.208,
15. वही- पृ.209, 16. वही- पृ.209
17. वही- पृ.209, 18. वही-5.1.13
19. वही-पृ. 209, 20. वही-पृ.210
21. वही-पृ.196, 22. वही-पृ.196
23. वही-पृ. 198, 24. वही-पृ. 5.1.2
25. वही-पृ. 5.1.7, 26. वही-पृ.199
27. वही- पृ. 200, 28. वही पृ. 200,
29. उत्तराध्ययन, 24.7, पृ. 70
30. दसवेआलियं-5.1.10
31. वही, पृ. 206

दो दिवसीय सम्मेलन सम्पन्न

केलवा। राष्ट्रीय अणुव्रत शिक्षक संसद संस्थान राजसमन्द द्वारा संचालित सघन अहिंसा प्रशिक्षण केन्द्र में टमकोर, अलसीसर, झुंझनु आदि जिले से आए 100 गांवों के 100 छात्र-छात्राओं व 14 अहिंसा प्रशिक्षकों को सम्बोधित करते हुए आचार्य श्री महाश्रमण ने कहा कि छात्र-छात्राओं में तार्किक विकास से उनके ज्ञान व अवबोध क्षमता का विकास संभव होता है, किन्तु जहां श्रद्धा व अटूट विश्वास होता है, वहाँ तर्क नहीं अपितु सेवा और समर्पण परिलक्षित होता है। शिक्षक-छात्रों के बौद्धिक विकास के साथ-साथ आत्मविश्वास के भाव जगाऐं, ताकि तर्क के साथ-साथ श्रद्धा के भाव प्रस्फुटित हों। आचार्य प्रवर ने टमकोर क्षेत्र से आये छात्र-छात्राओं व प्रशिक्षकों को व्यसनमुक्ति का संकल्प कराया। अहिंसा प्रशिक्षक श्री रमेश ने महाप्राण ध्वनि, संकल्प आदि के प्रयोग छात्र-छात्राओं को करवाए। संस्थान के अध्यक्ष अणुव्रत सेवी व शासन सेवी श्री भीखमचन्द नखत ने समागत छात्रों व अहिंसा प्रशिक्षकों का स्वागत किया तथा विविध प्रसंगों द्वारा देश के विभिन्न अहिंसा प्रशिक्षण केन्द्रों से लाभान्वित हो रहे लाखों विद्यार्थियों के बारे में जानकारी दी।

अणुव्रत प्रभारी मुनि श्री सुखलाल ने संस्थान द्वारा संचालित अहिंसा प्रशिक्षण केन्द्रों की विविध प्रवृत्तियों से नैतिक मूल्यों के जागरण व अहिंसक जीवन शैली के विकास को वर्तमान की दुविधाग्रस्त स्थितियों में एक कारगर व सकारात्मक उपाय बताया।

जीवन विज्ञान प्रभारी मुनिश्री किशनलाल ने जीवन जीने के विशुद्ध ज्ञान-जीवन विज्ञान को परिभाषित किया तथा जीवन विज्ञान के प्रयोगों को जीवन विकास का प्रमुख आधार बताया।

मंत्री मुनिश्री सुमेरमल ने कहा कि अणुव्रत व प्रेक्षाध्यान से जुड़े व्यक्तियों की अब देश में एक पहचान बनने लगी है। शिक्षकों का समुदाय एक प्रतिष्ठित समुदाय है, उनके द्वारा ही ज्ञान व आचरण का समयोचित विस्तार किया जा सकता है। राष्ट्रीय सह संयोजक धर्मचन्द जैन 'अनजाना' ने आचार्यश्री महाप्रज्ञ द्वारा प्रणीत अहिंसा प्रशिक्षण को इतिहास का एक उज्ज्वल पृष्ठ बताया। उन्होंने कहा- बिहार, उत्तरप्रदेश, झारखण्ड, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, चण्डीगढ़ आदि विभिन्न राज्यों में चल रहे अहिंसा प्रशिक्षण केन्द्रों के माध्यम से स्वस्थ समाज संरचना को बल मिल रहा है। राष्ट्रीय अणुव्रत शिक्षक संसद संस्थान के मंत्री श्री सोहनलाल धाकड़ ने आभार व्यक्त किया। मुनिश्री हिमांशु कुमार ने छात्र-छात्राओं को अभय की अनुप्रेक्षा का प्रयोग करवाए। बुद्धि, लज्जा, साहस व तंदुरूस्ती के सम्वर्द्धन के उपाय बताए। मुनिश्री अक्षयप्रकाश ने अणुव्रत गीत के प्रत्येक पद का अर्थ विस्तार से समझाते हुए इसे जीवन विज्ञान का आधारभूत सूत्र बताया। श्री बजरंग जैन ने छात्र-छात्राओं की अवबोध क्षमता की परख की तथा उन्हें विकास के पथ बढ़ने के लिए प्रेरित किया।

रात्रिकालीन सत्र में साध्वी प्रमुखा कनकप्रभा व मुख्य नियोजिका साध्वी विश्रुतविभा ने भी पाथेय प्रदान किया।

दूसरे दिन अणुव्रत गीत का सामूहिक संगान व आसन, प्राणायाम के प्रयोग विद्यार्थियों को करवाए गए।

प्रेषक-धर्मचंद अनजाना

विद्यार्थियों को दिया प्रेक्षाध्यान का प्रशिक्षण

सिकन्दराबाद। मुनि श्री जिनेश कुमार जी की प्रेरणा से राजकीय विद्यालय, मारेडपल्ली में शिक्षकों व कन्याओं हेतु जीवन विज्ञान व प्रेक्षाध्यान का एक कार्यक्रम श्रीमती निर्मला बैद के निर्देशन में आयोजित किया गया। श्रीमती निर्मला बैद ने विद्यार्थियों को मुद्रा, ध्यान, आसन आदि के बारे में बताया। महाप्राण ध्वनि व ज्योति केन्द्र प्रेक्षा के प्रयोगों से क्रोध व आवेश नियंत्रण के उपाय भी बताए गए। सहनशीलता व सहिष्णुता के विकास हेतु प्रेक्षाध्यान के प्रयोग करवाए गए।

प्रेषक- निर्मला बैद

प्रेक्षा प्रशिक्षक अधिवेशन 2011 में हुए चिन्तन का सारांश

1. वर्ष 2011 का अधिवेशन 27, 28 सितम्बर 2011 को आचार्यश्री महाश्रमणजी के सान्निध्य में केलवा में सम्पन्न हुआ।
2. 2012 में प्रेक्षा प्रशिक्षक अधिवेशन आचार्यश्री के सान्निध्य में जसोल में 29 व 30 सितम्बर को प्रेक्षावाहिनी के साथ आयोजित होगा। इसी समय 26 सितम्बर से 3 अक्टूबर तक 8 दिवसीय प्रेक्षाध्यान शिविर भी होगें।
3. इस वर्ष (2011-12) में 100 प्रेक्षा प्रशिक्षक तैयार करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।
4. स्थानीय स्तर पर प्रेक्षा प्रशिक्षक परीक्षा-2, जहां 25 या उससे अधिक परीक्षार्थी होंगे, वहां स्थानीय स्तर पर परीक्षा आयोजित की जायेगी। परीक्षा लेने हेतु परीक्षक केन्द्र से जायेंगे।

स्थानीय स्तर पर मुंबई में 24 व 25 दिसम्बर 2011 को एवं चैन्नई में 28 व 29 जनवरी 2012 को परीक्षा आयोजित की जायेगी। कोई भी परीक्षार्थी मुम्बई व चैन्नई में से किसी भी स्थान पर परीक्षा दे सकता है। मुंबई के लिए सम्पर्क सूत्र- एन.सी. जैन (09820498802) व चैन्नई के लिए सम्पर्क सूत्र- श्री माणकचन्द रांका (09440205427) हैं। अन्य स्थानों पर परीक्षा आयोजित करने हेतु एन.सी.जैन से सम्पर्क करें।

5. स्थानीय स्तर पर जहां प्रशिक्षण की सुविधा नहीं है उनके लिये जैन विश्व भारती, लाडनूं में 6 मार्च से 20 मार्च 2012 तक प्रशिक्षक शिविर का आयोजन किया जा रहा है। इस हेतु इच्छुक प्रशिक्षार्थी 6 जनवरी 2012 तक एन.सी.जैन. को सूचित करें। प्रशिक्षकों प्रशिक्षण शिविर के अन्तिम दिन परीक्षा होगी।
6. प्रेक्षा प्रशिक्षकों के नाम व सम्पर्क सूत्र प्रेक्षाध्यान की वेबसाईट पर दिये जायेंगे।
7. सभी प्रेक्षा प्रशिक्षक निर्धारित फार्मेट में अपनी त्रैमासिक रिपोर्ट प्रेक्षा फाउण्डेशन को प्रेषित करें।
8. प्रेक्षा फाउण्डेशन प्रशिक्षकों से निरन्तर सम्पर्क में रहेगी।
9. प्रेक्षा प्रशिक्षक स्थानीय कार्यशालाओं या शिविरों के आयोजन की सूचना स्वयं प्रेक्षाध्यान की वेबसाइट www.preksha.com पर दे सकते हैं। प्रशिक्षक इस सुविधा का उपयोग करें।
10. प्रेक्षा प्रशिक्षक तुलसी अध्यात्म नीडम् एवं प्रेक्षा विश्वभारती, कोबा में अपनी सेवाएं दें जिससे ये केन्द्र विकसित हो सकें।

प्रेषक-एन.सी. जैन

प्रसंग

अपराधी कौन?

न्यूयार्क के प्रसिद्ध मेयर ला गार्डिया को, जो अपनी सहृदयता और सुप्रबंध के लिए बहुत प्रसिद्ध थे, पुलिस-मुकदमों से बड़ी दिलचस्पी थी, क्योंकि उनसे उन्हें नगर की वास्तविक स्थिति की जानकारी प्राप्त हो जाती थी। इसलिए वे प्रायः पुलिस के मुकदमों की अध्यक्षता किया करते थे। एक दिन उनके न्यायालय में एक चोर को उपस्थित किया गया। उसका अपराध था कि उसने एक रोटी चुरायी थी। अभियुक्त ने अपने बचाव में सिर्फ एक ही वाक्य कहा, ''मेरा परिवार भूखा था, अतः मैं चोरी करने के लिए मजबूर था।'' मेयर ने फैसला दिया, ''चूँकि अभियुक्त ने चोरी की है, मैं उस पर दस डॉलर का जुर्माना करता हूँ।'' और दूसरे ही क्षण अपनी जेब से दस डालर निकालकर अभियुक्त को दे दिये और कहा, ''यह रहा तुम्हारा जुर्माना।'' फिर वे गंभीर स्वर में उपस्थित लोगों से बोले, ''साथ ही अदालत में उपस्थित हर व्यक्ति पर मैं 50 सेंट (आधा डालर) जुर्माना करता हूँ क्योंकि वह ऐसे समाज में रहने का महान् अपराध करता है,जिसमें एक बेबस इंसान को रोटी चोरी करने के लिए मजबूर होना पड़ता है।''

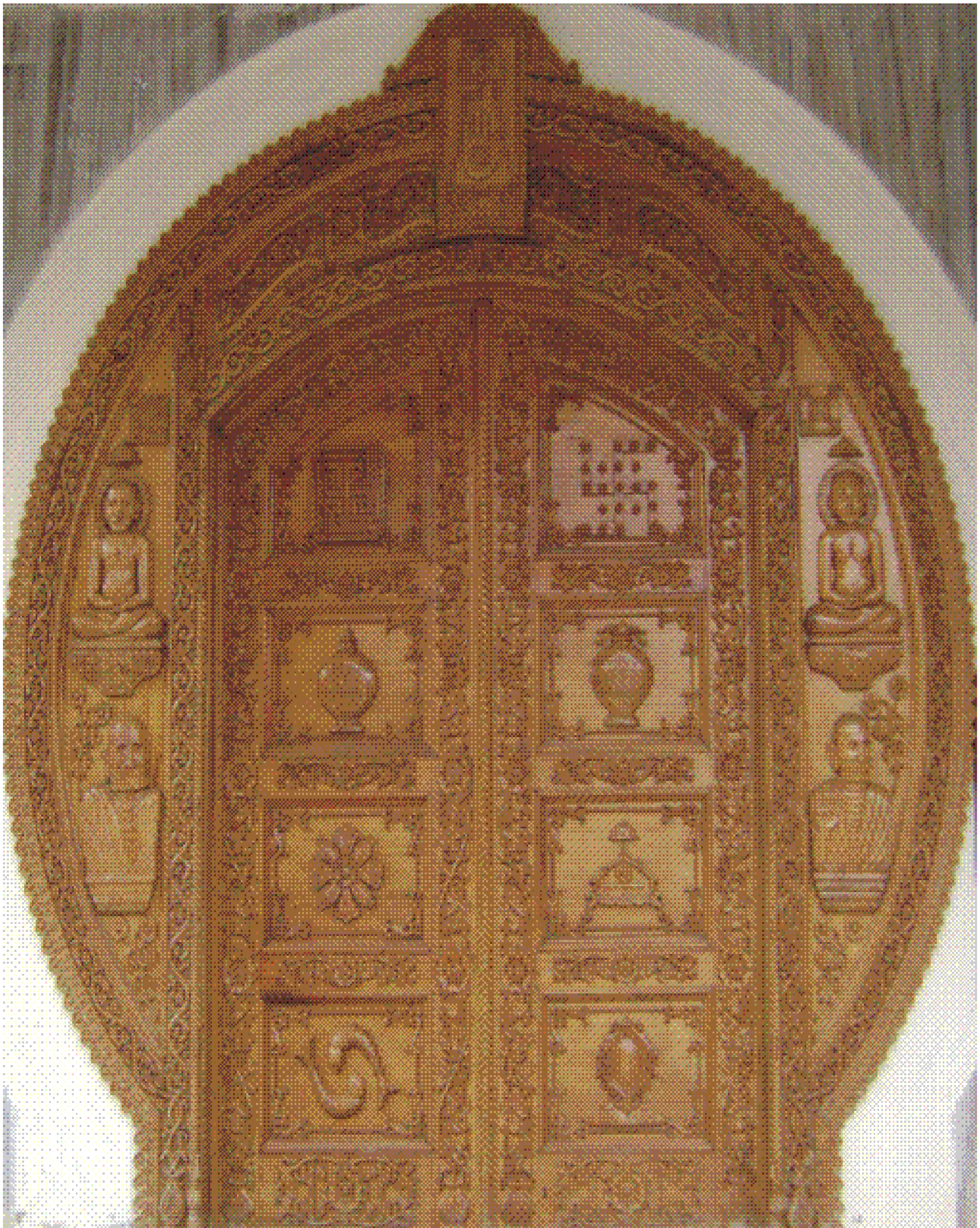

: With Best Compliments :

Chainroop Chindalia, Sardarshahar-Kolkata

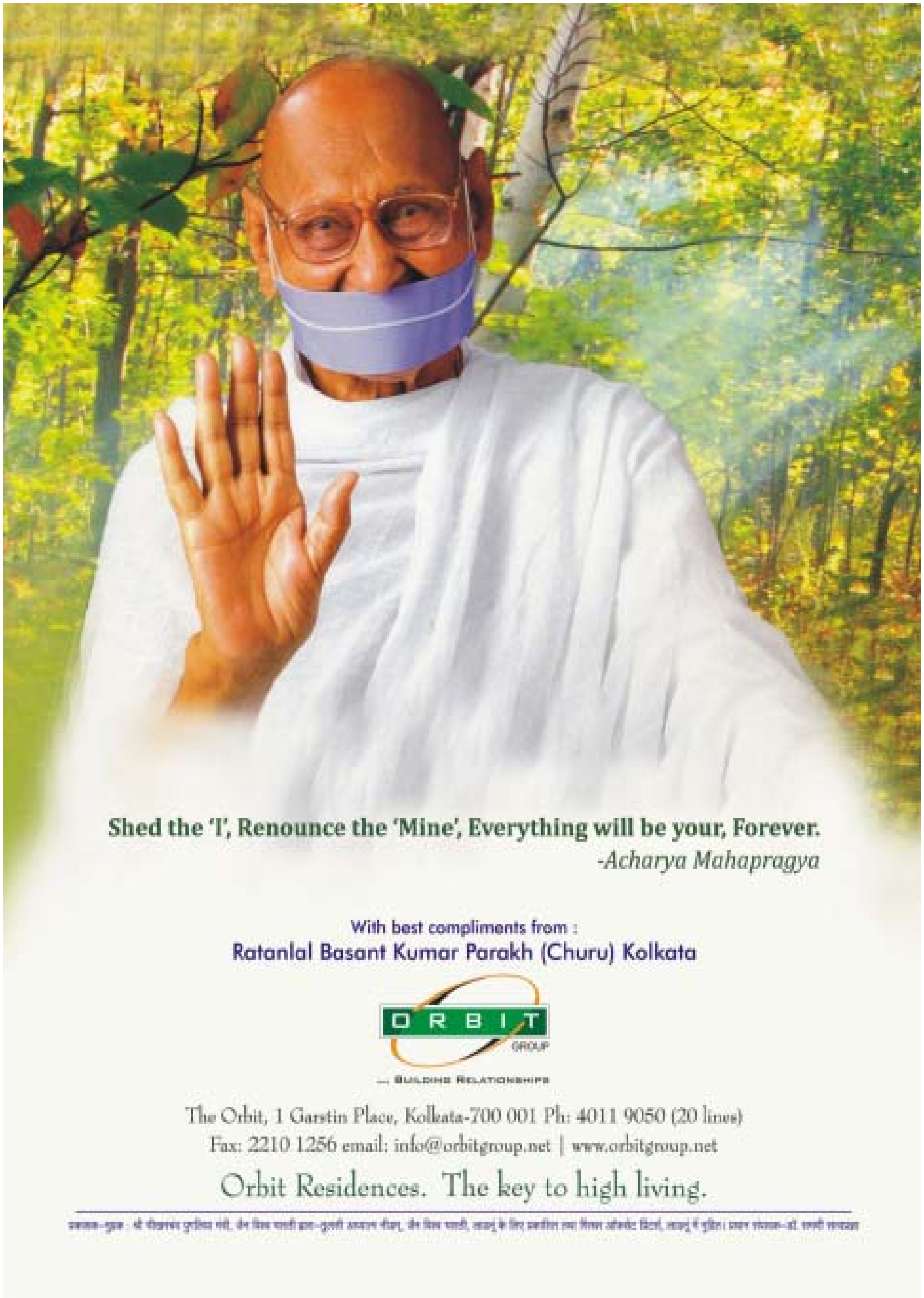
Shed the 'I', Renounce the 'Mine', Everything will be your, Forever.
-Acharya Mahapragya
With best compliments from :
Ratanlal Basant Kumar Parakh (Churu) Kolkata
ORBIT
GROUP
— BUILDING RELATIONSHIPS
The Orbit, 1 Garstin Place, Kolkata-700 001 Ph: 4011 9050 (20 lines)
Fax: 2210 1256 email: info@orbitgroup.net | www.orbitgroup.net
Orbit Residences. The key to high living.